₹ १००/- वार्षिक

दिव्य जीवन

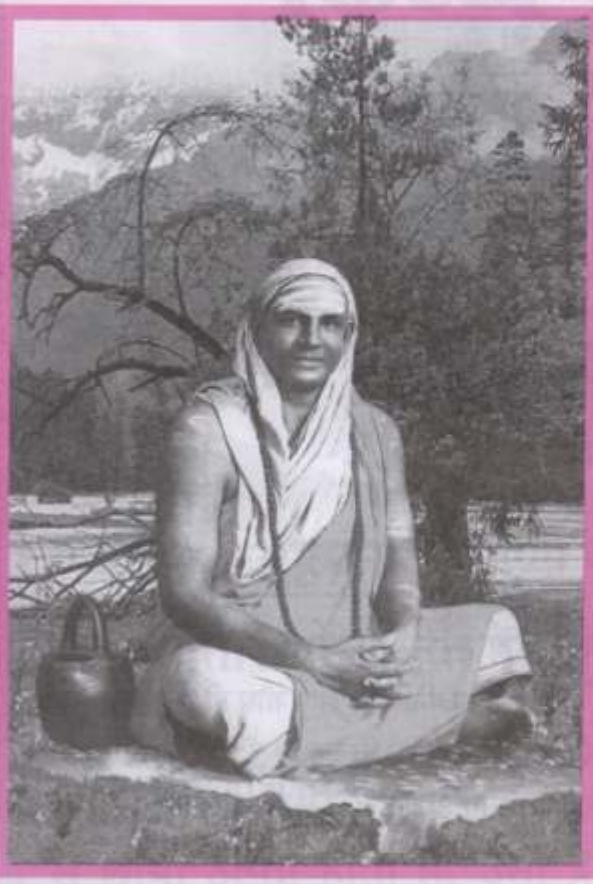

प्रार्थना मन को उन्नत बनाती है। यह मन को शुद्धता से भर देती है। यह ईश्वर की स्तुति से सम्बन्धित है। यह मन को ईश्वर के साथ जोड़ती है। प्रार्थना उस धाम को पहुँचा सकती है जहाँ तर्क जाने का साहस नहीं कर सकता है। प्रार्थना आपको आध्यात्मिक धाम अथवा भगवद्-धाम को ले जाती है। यह भक्त को मृत्यु के भय से विमुक्त कर देती है। यह मनुष्य को ईश्वर के निकट लाती है तथा उसे अपने अमर सुखमय स्वरूप का साक्षात्कार कराती है।

स्वामी शिवानन्द

अप्रैल २०२३

विश्व–प्रार्थना

हे स्नेह और करुणा के आराध्य देव!
तुम्हें नमस्कार है, नमस्कार है।
तुम सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान् और सर्वज्ञ हो।
तुम सच्चिदानन्दघन हो।
तुम सबके अन्तर्वासी हो।

हमें उदारता, समदर्शिता और मन का समत्व प्रदान करो।
श्रद्धा, भक्ति और प्रज्ञा से कृतार्थ करो।
हमें आध्यात्मिक अन्त:शक्ति का वर दो,
जिससे हम वासनाओं का दमन कर मनोजय को प्राप्त हों।
हम अहंकार, काम, लोभ, घृणा, क्रोध और द्वेष से रहित हों।
हमारा हृदय दिव्य गुणों से परिपूरित करो।

हम सब नाम–रूपों में तुम्हारा दर्शन करें।
तुम्हारी अर्चना के ही रूप में इन नाम–रूपों की सेवा करें।
सदा तुम्हारा ही स्मरण करें।
सदा तुम्हारी ही महिमा का गान करें।
तुम्हारा ही कलिकल्मषहारी नाम हमारे अधर–पुट पर हो।
सदा हम तुममें ही निवास करें।

स्वामी शिवानन्द

ईश्वर प्रेम है

ईश्वर सत्य है। ईश्वर प्रेम है। सत्य बोलिए। हर व्यक्ति से प्रेम कीजिए। आप शीघ्र ही उनका साक्षात्कार करेंगे। साधुओं, संन्यासियों तथा भक्तों के साथ सत्संग कीजिए। इससे आप विवेक, बल, वैराग्य, आध्यात्मिक शक्ति तथा मन की शान्ति प्राप्त करेंगे। दूसरा कोई मार्ग नहीं है। साधुओं की खोज कीजिए। वे सर्वत्र हैं। आपमें सच्चाई की आवश्यकता है। वे प्रेमपूर्वक सदा खुले हाथों से आपको स्वीकार करने के लिए तैयार हैं।

सत्संग से आपका मन ईश्वरीय विचार, ईश्वरीय महिमा, ईश्वरीय भाव, आत्मोद्बोधक आध्यात्मिक विचार से उसी प्रकार सन्तृप्त हो जायेगा, जिस प्रकार जल से चीनी सन्तृप्त होती है; तभी आप सदा दिव्य चेतना में संस्थित रहेंगे। तब आप उतनी ही देर में आत्म–साक्षात्कार कर सकते हैं, जितनी देर में मनुष्य एक फूल को मसल डालता है।

स्वामी शिवानन्द

दिव्य जीवन

Vol. XXXIV	अप्रैल २०२३	No. 1

प्रश्नोपनिषद्

तृतीयः प्रश्नः

आत्मन एष प्राणो जायते। यथैषा पुरुषे
छायैतस्मिन्नेतदाततं मनोकृतेनायात्यस्मिञ्छरीरे ।।३ ।।

यह प्राण आत्मा से उत्पन्न होता है। जिस प्रकार मनुष्य शरीर से छाया उत्पन्न होती है, उसी प्रकार इस आत्मा में प्राण व्याप्त है तथा यह मनोकृत संकल्पादि से इस शरीर में प्रवेश करता है।

शिवानन्दस्तोत्रपुष्पांजलिः

SIVANANDA-STOTRAPUSHPANJALI

PART–II

श्री स्वामी ज्ञानानन्द सरस्वती

मानातिरिक्तयशसं महनीयरूपं
दीनावनैकनिरतं विमलान्तरङ्गम्
नानागुणोदवसितं शिवदेशिकेशम्
पीनानुकम्पमनिशं हृदि भावयेऽहम् ।।१९।।

मैं गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज का श्रद्धापूर्वक ध्यान करता हूँ जिनका यश असीम है, जिनका स्वरूप मनोहारी है, जो दीन–दुःखियों की सहायता करने हेतु सदैव तत्पर हैं, जिनका हृदय अत्यधिक पावन है, जो सद्गुणों के भण्डार हैं तथा अत्यन्त करुणाशील हैं।

निशातशेमुषीबलं सुरापगातटोल्लस–
न्निशान्तवासलालसं निरस्तसर्वकल्मषम्
निशाकरोपमाननस्फुरत्स्मितांशुचन्द्रिकं
निशामनार्हमाश्रये शिवाभिधानदेशिकम् ।।२०।।

जो प्रखर मेधाशक्ति से सम्पन्न हैं, जिन्हें माँ गङ्गा के पावन–प्रशान्त तट पर वास करना अति प्रिय है, जो समस्त दोषों से मुक्त हैं, जिनके चन्द्रमा के समान उज्ज्वल मुख पर चन्द्र–किरण सम मन्द मुस्कान सुशोभित है तथा जिनके दर्शन प्राप्त होना परम सौभाग्य का विषय है, उन गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के दिव्य चरणकमलों का मैं आश्रय ग्रहण करता हूँ।

(क्रमशः)

(अनुवादिका : स्वामी गुरुवत्सलानन्द माता जी)

ईश्वर मेरे जीवन में कैसे आया

सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

'ईश्वर मेरे जीवन में कैसे आया'—इस प्रश्न को यह कह कर सहज ही टाला जा सकता था कि जब मैं स्वर्गाश्रम में रह रहा था, उस दीर्घकालीन तपस्या एवं ध्यान के फलस्वरूप अनेक महर्षियों के दर्शन होने तथा उनके आशीर्वाद प्राप्त करने पर ईश्वर श्रीकृष्ण के रूप में मेरे सामने प्रकट हुए; किन्तु यह बात न तो पूर्ण सत्य ही होती और न उस ईश्वर-सम्बन्धी प्रश्न का सम्यक् उत्तर ही होता जो असीम है तथा मन-वाणी से परे है। वैश्व चेतना आकस्मिक घटना अथवा दैवयोग जैसी वस्तु नहीं है। यह तो वह शिखर है जहाँ कण्टकाकीर्ण तथा फिसलने वाले मार्ग द्वारा पहुँचा जा सकता है। इस दुर्गम मार्ग की प्रत्येक सीढ़ी पर कदम रखते हुए मैं ऊपर चढ़ा हूँ। प्रत्येक सीढ़ी पर मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि ईश्वर मेरे जीवन में प्रवेश करके मुझे अगली सीढ़ियों पर चढ़ने के लिए आगे की ओर बढ़ा रहे हैं।

मेरे पिताजी आनुष्ठानिक पूजा में रुचि रखते थे और इसमें वे बहुत नियमित थे। वे जिस प्रतिमा की उपासना करते थे, वह मेरी बालसुलभ बुद्धि के अनुसार ईश्वर ही थी। मैं पुष्प और पूजा की अन्य सामग्री जुटाने में अपने पिताजी की सहायता करके आनन्द अनुभव करता था। इस प्रकार की पूजा में उन्हें तथा मुझे जो आन्तरिक सन्तोष होता था, उससे मेरे हृदय में यह धारणा दृढ़ हो गयी कि भक्तजन जिन मूर्तियों की भक्तिभाव से आराधना करते हैं, उनमें ईश्वर का वास है। इस भाँति ईश्वर मेरे जीवन में प्रथम बार आया और सीढ़ी के प्रथम डण्डे पर उसने मेरे पाँव रख दिये।

वयस्क होने पर मैं जिमनास्टिक तथा व्यायाम में रुचि लेने लगा। मैंने एक निम्न जाति के अध्यापक से (जो हरिजन थे) पटेबाजी (Fencing) सीखना आरम्भ किया, किन्तु मैं उनके पास कुछ इने-गिने दिन ही जा सका; क्योंकि बाद में मुझे यह समझाया गया कि एक उच्चवर्णीय ब्राह्मणकुलोत्पन्न बालक के लिए एक अछूत का शिष्यत्व ग्रहण करना अनुचित है। मैंने इस विषय पर गहराई से विचार किया। एक क्षण के लिए मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि अपने पिता के पूजा-कक्षा में स्थित मूर्ति में जिस ईश्वर की हम सब पूजा किया करते थे, वह इस अछूत के हृदय में प्रवेश कर गया है। वह हरिजन सचमुच मेरे गुरु थे; अत: मैं कुछ पुष्प, मिष्टान्न तथा वस्त्र ले कर उनकी सेवा में उपस्थित हुआ। उन्हें पुष्प-माला पहनायी, उनके चरणों में पुष्प अर्पित किये और उन्हें दण्डवत् प्रणाम किया। इस भाँति भी ईश्वर मेरे जीवन में आया और उसने वर्ण-भेद के आवरण को विदूरित किया।

मैं शीघ्र ही इस बात का अनुभव कर सका कि मेरा यह कदम कितना महत्त्वपूर्ण था; क्योंकि आगे चल कर मुझे चिकित्सा-व्यवसाय में सम्मिलित हो कर मानवमात्र की सेवा करनी थी। उस स्थिति में जाति-भेद के दुराग्रह ने उस सेवा को एक आडम्बर ही बना दिया होता। ईश्वरीय प्रकाश से इस दुराग्रह के कुहरे के हट जाने के कारण प्रत्येक व्यक्ति की सेवा करना मेरे लिए सहज तथा स्वाभाविक हो गया। मनुष्य को उसके दु:ख से छुटकारा दिलाने से सम्बन्धित प्रत्येक प्रकार की सेवा करने में मुझे अतीव प्रसन्नता का अनुभव हुआ करता था। यदि मलेरिया का कोई अच्छा नुस्खा मेरे हाथ लग जाता तो मेरी यह तीव्र इच्छा होती कि तत्काल ही समस्त संसार इससे अवगत हो जाये। रोगों के निवारण, स्वास्थ्य-संवर्धन तथा बीमारियों की रोकथाम-सम्बन्धी सभी प्रकार के ज्ञान को प्राप्त करने और उसमें सभी को अपना भागीदार बनाने के लिए मैं सदा ही उत्सुक रहा करता था।

इसके पश्चात् मलाया में रोगियों के रूप में ईश्वर

स्वामी शिवानन्द जन्म शताब्दी स्मृति ग्रन्थ १९८७ से उद्धृत आलेख

परम श्रद्धेय गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के पुण्यतिथि आराधना दिवस की ६०वीं वर्षगाँठ

मेरे जीवन में आया। इस समय उसका कोई एक उदाहरण प्रस्तुत कर सकना मेरे लिए कठिन है और कदाचित् अनावश्यक भी। देश और काल तो मन की कल्पना मात्र हैं। ईश्वर का इनसे कोई सम्बन्ध भी नहीं है। अपने मलाया-प्रवास की पूरी अवधि को मैं एक ही घटना के रूप में देख सकता हूँ। इस घटना में ईश्वर मेरे निकट रोगियों और पीड़ित व्यक्तियों के रूप में आया। लोग शारीरिक तथा मानसिक रोग से आक्रान्त हैं। कुछ के लिए जीवन धीरे-धीरे होने वाली एक मृत्यु है और किन्हीं अन्य लोगों के लिए मृत्यु जीवन से अधिक अच्छी है। कुछ लोग मृत्यु का सामना कर सकने में असमर्थ होने के कारण कष्टमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं तो कुछ मृत्यु को आमन्त्रित कर आत्महत्या कर रहे हैं।

मुझमें एक लालसा जगी कि यदि ईश्वर ने इस संसार को नरक-स्थान नहीं बनाया है, जहाँ दुराचारी व्यक्ति कष्ट भोगने के लिए डाल दिये जाते हों और यदि दु:ख तथा विवशता के अतिरिक्त भी कोई सत्ता है (और मैंने अपनी अन्त:प्रज्ञा से अनुभव किया कि ऐसी कोई सत्ता अवश्यमेव होगी), तो उसे जानना और अनुभव करना चाहिए।

मेरे जीवन के इस निर्णायक समय में ईश्वर एक भिक्षु के रूप में मेरे पास आया और उसने मुझे वेदान्त की प्राथमिक शिक्षा दी। अब इहलौकिक जीवन के रचनात्मक पक्ष तथा मानव-जीवन के यथार्थ लक्ष्य और उद्देश्य मेरे सामने स्पष्ट हो गये। इस तथ्य ने मुझे मलाया से हिमालय की ओर आकर्षित किया। अब सर्वभूतान्तरात्मा के रूप में उस (ईश्वर) का साक्षात्कार करने की कामना के रूप में ईश्वर मेरे निकट आया और इस कामना ने मेरी अन्य सभी कामनाओं को आत्मसात् कर लिया।

ध्यान और सेवा की साधना द्रुत गति से चलती रही। इस साधना में मुझे विभिन्न प्रकार की आध्यात्मिक अनुभूतियाँ हुईं। शरीर, मन और बुद्धि की उपाधियाँ विलीन हो चलीं और समस्त विश्व प्रभु की ज्योति के रूप में विभासित होने लगा। अब ईश्वर इस ज्योति के रूप में आया जिसमें सभी पदार्थों ने दिव्य रूप धारण कर लिया। क्लेश तथा पीड़ा, जिनसे प्राय: सभी प्राणी आक्रान्त दिखते हैं, उस मृगतृष्णा अथवा भ्रान्ति के समान प्रतीत होने लगे, जो मनुष्य में निहित विषय-वासनाओं के कारण उत्पन्न होती है।

'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' को जानने-समझने के लिए अभी मुझे एक और पड़ाव पार करना था। ८ जनवरी १९५० को ईश्वर एक अर्द्ध-विक्षिप्त आक्रामक के रूप में आया जिसने आश्रम के रात्रिकालीन सत्संग में विघ्न उत्पन्न करना चाहा। उसका प्रयास असफल रहा। मैं उसके सम्मुख नतमस्तक हुआ, उसकी पूजा की और अन्त में उसे उसके घर भेज दिया। बुराई का अस्तित्व भलाई का गौरव प्रकट करने के लिए ही है। बुराई तो एक आभासी रूप है। उसके आवरण के तले एक ही आत्मा सभी में देदीप्यमान रहती है।

यहाँ एक विचारणीय बात का उल्लेख कर देना आवश्यक है कि इस (आध्यात्मिक) क्रम-विकास में कोई भी वस्तु ऐसी नहीं है जिसे पूर्व में अर्जित करने के पश्चात् कालान्तर में पूर्णत: त्याग देना पड़े। एक साधना दूसरे में संलीन हो गयी और इसके फलस्वरूप प्रकट हुआ समन्वययोग। मूर्तिपूजा, रोगी की निस्स्वार्थ सेवा, ध्यान, विश्व-प्रेम का अर्जन (जिसने जाति, मत, सम्प्रदाय तथा धर्म की सीमाओं का अतिक्रमण किया) अब विश्व-चेतना के रूप में उद्घाटित हुए। मुझे शीघ्र ही इस ज्ञान में सबको सहभागी बनाना था। ये सब मेरी सत्ता के अनिवार्य अंग बन चुके हैं।

मेरे इस मिशन का प्रचार-प्रसार होता रहा। सन् १९५० में मैंने सम्पूर्ण भारत की यात्रा की। तब ईश्वर अपने विराट् स्वरूप में दिव्य जीवन के सिद्धान्तों को ध्यानपूर्वक सुनने को समुत्सुक भक्तजनों के रूप में मेरे समक्ष आया। प्रत्येक केन्द्र पर मुझे ऐसा लगा मानो ईश्वर ही मेरे माध्यम से बोल रहा है और वही स्वयं ही जनसमूह के रूप में विस्तारित अपने बृहद् रूप में मेरा भाषण सुन रहा है, मेरे साथ गा रहा है और मेरे साथ प्रार्थना कर रहा है। वह बोल रहा है और वही सुन रहा है। **सर्वं खल्विदं ब्रह्म।**

(अनुवादक : श्री स्वामी ज्योतिर्मयानन्द जी)

गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज का सन्देश

परम पावन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज

इस धरा पर एक मनुष्य के रूप में जन्म लेकर, आपका प्रमुख कर्तव्य क्या है? हम सब यहाँ अपने वास्तविक स्वरूप को भूलकर, अपने जीवन के वास्तविक लक्ष्य को भूलकर, अर्द्धस्वप्न एवं अर्द्धनिद्रा का जीवन जी रहे हैं। हमारा जीवन निरर्थक ही बीता जाता है। दिन, महीने, वर्ष व्यतीत होते जाते हैं और जीवन के मुख्य लक्ष्य को प्राप्त किये बिना एक दिन इस जीवन का अन्त भी हो जाता है। भगवान् से हमें 'जीवन' रूपी महान् उपहार प्राप्त हुआ है, यदि इस जीवन को उचित विवेकपूर्ण रीति से व्यतीत किया जाये, तो यह मनुष्य-जीवन परमानन्द की प्राप्ति करा सकता है, इस अमूल्य जीवन का उच्चतम सदुपयोग किये बिना, परमानन्द की प्राप्ति किये बिना इसे व्यर्थ गँवा देने से अधिक हानि तथा अधिक दु:खप्रद अन्य कुछ नहीं है। स्वयं को जीवन के इस महत्त्वपूर्ण कर्तव्य का स्मरण करायें।

आपको अज्ञान-निद्रा से जगाना तथा इस महान् मनुष्य-जीवन का सदुपयोग करने की प्रेरणा देना ही समस्त महापुरुषों-गुरुजनों का कार्य रहा है। और मैं, बीसवीं शताब्दी की एक महानतम आध्यात्मिक विभूति के एक विनीत सेवक एवं शिष्य के रूप में, आज आप सबको यह स्मरण कराते हुए परम हर्ष एवं धन्यता का अनुभव कर रहा हूँ, ''अपने जीवन के वास्तविक लक्ष्य को नहीं भूलें। आध्यात्मिक मार्ग में सफलता प्राप्ति के सीधे मार्ग को छोड़कर नाशवान वस्तु-पदार्थों के पीछे नहीं भागें; अन्यथा बाद में आपको गहरा पश्चात्ताप होगा।'' जीवन की जब अन्तिम घड़ी आयेगी, तब आप पछताते हुए कहेंगे, ''ओह, मैंने कितनी बड़ी गलती की है। अपने जीवन का सदुपयोग नहीं किया।'' परन्तु अब दु:खी होने, पश्चात्ताप करने का क्या अर्थ है जब बहुत देर हो चुकी है, और आप अपने कल्याण के लिए कुछ नहीं कर सकते हैं तथा बीते वर्षों को, घण्टों को, मिनटों को वापिस नहीं ला सकते हैं। इसलिए आपको सजग-जाग्रत होना चाहिए तथा अपने जीवन के अर्थ एवं महत्त्व को अच्छी प्रकार से समझते हुए विवेकपूर्ण ढंग से जीवन जीना चाहिए। समय-समय पर सत्संग में भाग लेने का यही उद्देश्य है कि हम पुन:-पुन: सुन सकें और स्मरण कर सकें कि हम यहाँ क्यों हैं, हमारे जीवन का उद्देश्य क्या है।

मुझे गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की महान् विरासत 'डिवाइन लाइफ सोसायटी' के एक प्रतिनिधि के रूप में यहाँ आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। गुरुदेव के जीवन-काल में, इस सेवक को उनकी व्यक्तिगत सेवा करने का परम सौभाग्य प्राप्त हुआ। अपनी महासमाधि के उपरान्त, उन्होंने इस संस्था 'डिवाइन लाइफ सोसायटी' के रूप में अपना दूसरा स्वरूप, अपनी दूसरी प्रतिकृति हमें प्रदान की है। जिन उच्चादर्शों का श्री गुरुदेव ने अपनी जीवन-अवधि में प्रतिनिधित्व किया, वर्तमान में यह संस्था उन आदर्शों का प्रतिनिधित्व करती है। इसलिए हमें इस संस्था में, श्री गुरुदेव के दर्शन करने चाहिए। क्योंकि वास्तव में यह संस्था क्या है? यह गुरुदेव के सम्पूर्ण जीवन का सारतत्त्व है, यह उनकी तपस्या, उनके ज्ञान एवं उनके आत्म-साक्षात्कार का मूर्त रूप है। उनके जीवन की समस्त ऊर्जा, समय, ज्ञान एवं शक्ति का उपयोग इस संस्था के

'विजडम लाइट' पत्रिका १९८७ से उद्धृत आलेख का अनुवाद

परम श्रद्धेय गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के पुण्यतिथि आराधना दिवस की ६०वीं वर्षगाँठ

निर्माण हेतु ही हुआ। इस प्रकार, उन्होंने स्वयं को 'डिवाइन लाइफ सोसायटी' नामक इस महान् संस्था के रूप में परिवर्तित कर दिया। अत: डिवाइन लाइफ सोसायटी की सेवा करना, स्वयं श्री गुरुदेव की सेवा करना है। इसी कारण से, उनका यह सेवक विश्व के विभिन्न देशों का, डिवाइन लाइफ सोसायटी की विविध शाखाओं का भ्रमण करते हुए अपनी सेवाएँ अर्पित कर रहा है। मैं ऐसा मानता हूँ कि डिवाइन लाइफ सोसायटी की सेवा, गुरु-सेवा से भिन्न नहीं है क्योंकि ये दोनों अभिन्न हैं, एक ही हैं। इसलिए सोसायटी की सेवा गुरुदेव की सेवा है। श्री गुरुदेव के प्रत्येक शिष्य, प्रत्येक भक्त, उनकी जीवन-परिवर्तनकारी शिक्षाओं से लाभान्वित प्रत्येक साधक को गुरुदेव के इस द्वितीय स्वरूप, इस शिवानन्द सोसायटी की सेवा करने को अपना महान् सौभाग्य समझना चाहिए।

इसलिए, श्री गुरुदेव एवं डिवाइन लाइफ सोसायटी में अन्तर नहीं करें। इस संस्था की सेवा गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की सेवा ही है। डिवाइन लाइफ सोसायटी का उद्देश्य 'दिव्य जीवन' के सन्देश का प्रचार-प्रसार करना है और मैं यहाँ डिवाइन लाइफ सोसायटी की सेवा हेतु ही आया हूँ, इसलिए मैं आपके समक्ष 'दिव्य जीवन' के विषय में अपने विचार रखना चाहता हूँ।

दिव्य जीवन ही वास्तविक जीवन है, सच्चा जीवन है। दिव्य जीवन वह आदर्श जीवन है, जैसा जीवन आपको जीना चाहिए। दिव्य जीवन अपने वास्तविक दिव्य स्वरूप की जाग्रति के साथ बिताया जाने वाला जीवन है—''मैं केवल एक भौतिक प्राणी नहीं हूँ। मैं केवल यह शरीर और मन नहीं हूँ। मैं विचारों, भावनाओं और इच्छाओं का समूह मात्र नहीं हूँ। मैं एक आध्यात्मिक सत्ता हूँ, शाश्वत सत्ता हूँ। मैं अमर आत्मा हूँ। मैं ज्योतियों की ज्योति 'परम ज्योति' की एक किरण हूँ। मैं परमपिता परमात्मा का अंश हूँ। मैं सदैव भगवान् में संस्थित हूँ। वे ही मेरे अस्तित्व के स्रोत हैं।'' इस प्रकार यह जानते हुए कि भगवान् ही हमारी सत्ता-अस्तित्व का मूल है, आश्रय है तथा हम सदा उनके साथ एकत्व की अवस्था में हैं, हम अपने जीवन को दिव्य बनाने का प्रयास करते हैं। हम अपने जीवन में दिव्यता को अभिव्यक्त करने का प्रयास करते हैं। जब हम इस सत्य के प्रति जाग्रत होते हैं कि हम दिव्य हैं और हमारी इस दिव्यता को जीवन में प्रकट करना चाहते हैं, तो हमारा पुराना स्वभाव, हमारी पुरानी शारीरिक-मानसिक प्रकृति और हमारी विषयासक्ति बाधा बन जाते हैं। नाशवान पदार्थों के पीछे भागने वाला हमारा स्वभाव, हजारों इच्छाओं-कामनाओं से भरा मन सदैव यही कहता है, ''मुझे यह चाहिए, वह चाहिए, मुझे सब-कुछ चाहिए, जो-कुछ भी सर्वश्रेष्ठ है, मुझे वह सब चाहिए ताकि मैं प्रसन्न और सन्तुष्ट रह सकूँ।'' इसलिए यदि आप स्वार्थ के आधार पर जीवन व्यतीत करते हैं, यदि आप सदैव दूसरों से कुछ लेना चाहते हैं, अपने लाभ के लिए दूसरों का उपयोग करना चाहते हैं, तो यह दिव्य जीवन के सर्वथा विपरीत जीवन है। यह आपके सच्चे उच्चतर स्वरूप को अस्वीकार करना ही है। और ऐसा आपकी स्वार्थपरता के कारण होता है। स्वार्थ, वास्तव में, एक प्रकार का अन्धापन ही है। हम स्वयं को यह शरीर एवं मन मान लेते हैं, नाम एवं रूप युक्त एक व्यक्तित्व मान लेते हैं। अपने इस पृथक् व्यक्तित्व से हम इतना प्रेम करते हैं कि हम अपना पूरा जीवन अपने स्वार्थपूर्ण उद्देश्यों एवं इच्छाओं की पूर्ति में व्यतीत कर देते हैं; अन्य व्यक्तियों के सुख एवं हित के विषय में कभी नहीं सोचते हैं; 'मैं दूसरों की सहायता एवं भलाई किस प्रकार कर सकता हूँ'—यह विचार कभी नहीं करते हैं।

यह स्वार्थपरायणता आपके वास्तविक दिव्य

स्वरूप की अभिव्यक्ति में एक महान् बाधा है। यह एक आसुरी सम्पदा है, आसुरी प्रवृत्ति है। स्वार्थ के कारण मनुष्य उचित-अनुचित का भेद भूल जाता है, वह यही सोचता है कि येन केन प्रकारेण मेरी इच्छा पूरी होनी चाहिए। इस प्रकार, स्वार्थ मनुष्य को समस्त मानवीय मूल्यों और नैतिक मूल्यों के प्रति अन्धा बना देता है। वह नैतिक आदर्शों की अवहेलना करने लगता है और अपनी अन्तरात्मा की आवाज को भी अनसुना कर देता है। यदि उसकी अन्तरात्मा कहती है, 'यह कार्य गलत है, इसे नहीं करना चाहिए' ; तो वह इस पर ध्यान नहीं देता है। क्योंकि उसका स्वार्थ, अन्तरात्मा की इस आवाज को, इस परामर्श को, नहीं सुनना चाहता है। यह उसके हितों के, उसकी इच्छाओं के विरुद्ध है। अन्तरात्मा की इस आवाज को अस्वीकृत करने का परिणाम क्या होता है? अपने स्वार्थपूर्ण स्वभाव के कारण मनुष्य अनैतिक बन जाता है, वह झूठ बोलता है, दूसरों को धोखा देता है, छल-कपट करता है और यदि कोई उसके स्वार्थ की पूर्ति में बाधा बन जाये, तो वह उस पर क्रोध करता है एवं उससे घृणा करने लगता है। इस प्रकार, स्वार्थ से ही झूठ, छल-कपट, द्वेष, घृणा एवं संघर्ष का जन्म होता है। स्वार्थ हमें आदर्श एवं महान् बनाने की अपेक्षा, हमारे पतन का कारण बन जाता है। स्वार्थ के कारण व्यक्ति समस्त मर्यादा एवं लज्जा को छोड़कर, सभी नैतिक मूल्यों एवं आदर्शों की अवहेलना कर, अपने जीवन को अधोगामी दिशा में ले जाता है।

इस नैतिक पतन के कारण ही वह जन्म-मरण के चक्र में फँस जाता है। क्योंकि मनुष्य-जीवन को शासित-संचालित करने वाला एक महान् नियम है—आप जैसा बीज बोयेंगे, वैसी फसल ही प्राप्त करेंगे। यदि आप अच्छे कर्म करेंगे, तो आपको अच्छे-सुखद अनुभव प्राप्त होंगे। बुरे कर्मों के परिणामस्वरूप आपको दु:खद अनुभव प्राप्त होंगे। यह कार्य-कारण का नियम है, यह कर्म एवं कर्मफल का नियम है। यही मनुष्य-जीवन को परिव्याप्त एवं शासित करता है। यह क्रिया एवं प्रतिक्रिया का नियम है। इसलिए यदि स्वार्थ के कारण, व्यक्ति इस नियम की अवहेलना करता है, इसको भुलाकर सभी प्रकार के बुरे एवं अनैतिक कर्म करता है तो वह अपने दु:खों को स्वयं ही आमन्त्रित करता है। मनुष्य स्वयं ही अपने दु:खों-कष्टों का निर्माता है। भगवान् कभी दण्ड नहीं देते हैं। वे दण्डाधिकारी नहीं हैं, वे प्रेम के विग्रह हैं। परन्तु मनुष्य स्वयं ही जीवन के इस महान् नियम को भूलकर, स्वार्थपरायण जीवन जीता है और परिणामस्वरूप नैतिकता के पथ से च्युत होकर, अपने दु:खों का कारण बनता है।

भगवान् दण्ड नहीं देते हैं और न ही यह नियम दण्ड देता है। आप स्वयं अपने को दण्ड देते हैं, आपका कर्म ही आपको दण्ड देता है। आप कारण उत्पन्न करते हैं, परन्तु उसका परिणाम नहीं चाहते हैं। यह कैसे सम्भव हो सकता है? यदि आप बीज बोयेंगे, तो उसकी फसल काटनी ही होगी। यदि आप किसी भूमि में बीज बोते हैं, तो फसल उसी भूमि में प्राप्त होगी, किसी अन्य भूमि में नहीं। इसलिए बुरे कर्मों के बीज जहाँ बोये गये हैं, वहीं दु:ख-कष्ट की फसल भी प्राप्त होगी। परन्तु कारण-कार्य अथवा कर्म-कर्मफल का यह नियम, एक महान् एवं न्यायपूर्ण नियम है। यदि आप इस नियम का उचित पालन करते हुए अच्छे विचार रखेंगे एवं अच्छे कर्म करेंगे, तो आप अपने लिए एक सुखद एवं सौभाग्यपूर्ण उज्ज्वल भविष्य का निर्माण करेंगे। अत: यह महान् नियम किसी के साथ पक्षपात नहीं करता है, यह केवल न्यायपूर्ण रूप में क्रियान्वित होता है। इसलिए बुद्धिमान् बनें और इस नियम की उचित अनुपालना करें। ऐसा आप तभी कर सकते हैं जब आप इस सत्य के प्रति जाग्रत रहते हैं कि आपका वास्तविक स्वरूप दिव्य है।

आपके भीतर समस्त शुभता, पवित्रता एवं दिव्यता है। क्योंकि दिव्य सद्गुण आपकी सहज विरासत है। भगवान् का अंश होने के कारण, आपमें केवल दिव्य सद्गुण ही हैं। हम भगवान् को करुणासागर, दयामूर्ति आदि नामों से पुकारते हैं; उनके ये दिव्य गुण आपकी सहज-स्वाभाविक विरासत हैं। आप परमपिता परमात्मा की सन्तान हैं, इसलिए ये गुण आपमें जन्मत: हैं, सदा-सर्वदा हैं। आपका वास्तविक स्वरूप, आपकी आत्मा नित्य शुद्ध, नित्य परिपूर्ण, आनन्दमय एवं शान्तिमय है। दिव्य जीवन, इसी सत्य के प्रति जाग्रत रहने एवं इसे जीवन में अभिव्यक्त करने की प्रक्रिया है। यह आपके दिव्य स्वरूप की जाग्रति के साथ जीवन व्यतीत करना है। अपने दिव्य स्वरूप को अपने समस्त विचारों, शब्दों एवं कार्यों में अभिव्यक्त करने से आपका जीवन दिव्य प्रकाशमय बन जायेगा। आप धन्य हो जायेंगे। आप जहाँ भी हैं, अपने वास्तविक स्वरूप की जाग्रति को बनाये रखें। यही दिव्य जीवन है। यही अपनी अन्तर्निहित दिव्य परिपूर्णता को प्रकटित करने हेतु जीवन जीना है।

मान लीजिए कि आपके पास पचास हजार डॉलर का रेखांकित चेक (crossed cheque) है। अब आप मुझे बताइए कि क्या आप धनी हैं अथवा निर्धन हैं? आप निर्धन नहीं हैं, क्योंकि आपके पास पचास हजार डॉलर का चेक है। परन्तु क्या आप इस चेक द्वारा किसी दुकान पर जाकर अपने लिए कुछ खरीद सकते हैं? यह चेक आपके नाम पर है और रेखांकित होने से केवल आप ही इससे धनराशि प्राप्त कर सकते हैं। यह ड्राफ्ट नहीं है। इसलिए कोई अन्य व्यक्ति इसे बैंक ले जाकर धन प्राप्त नहीं कर सकता है। आपको ही पहले इस चेक को अपने खाते में जमा कराना होगा और बाद में धनराशि निकालनी होगी। तभी यह चेक उपयोगी होगा। केवल आप ही इस रेखांकित चेक का उपयोग कर सकते हैं, अन्य व्यक्ति नहीं। यदि आप इसे किसी दुकानदार को देकर कुछ खरीदना चाहेंगे, तो वह कहेगा, ''मुझे क्षमा कीजिए । मैं इसे नहीं ले सकता हूँ, क्योंकि यह मेरे उपयोग का नहीं है। आप मुझे बीस डॉलर नकद दीजिए।'' इसलिए यद्यपि आप धनी तो हैं, परन्तु आपके पास धन नहीं है। आप समृद्ध हैं, परन्तु इस समृद्धि का आप तब तक उपयोग नहीं कर सकते हैं जब तक आप एक आवश्यक प्रक्रिया को पूर्ण नहीं कर लेते हैं अर्थात् जब तक आप उस रेखांकित चेक को नकद राशि में परिवर्तित नहीं करवा लेते हैं। केवल तभी आप जो चाहे, वह खरीद सकते हैं।

जिस प्रकार इस चेक में पचास हजार डॉलर की पूर्ण राशि अन्तर्निहित है, उसी प्रकार आप दिव्य हैं, आपके भीतर एक आदर्श, सुन्दर एवं दिव्य सद्गुणों से पूर्ण उज्ज्वल जीवन की सम्भावना छिपी है। परन्तु यह चेक रेखांकित है। इसलिए आपको साधना रूपी प्रक्रिया द्वारा इसे सक्रिय करना होगा। अपनी अन्तर्निहित सुप्त दिव्यता को जगाना एवं व्यावहारिक रूप में प्रकट करना ही दिव्य जीवन है। केवल थोड़ा भजन-ध्यान कर लेना ही दिव्य जीवन नहीं है। आपके सम्पूर्ण जीवन को दिव्यता से आपूरित करना दिव्य जीवन है। आपके कार्य, व्यवसाय, सामाजिक गतिविधियों, पारिवारिक जीवन, अन्य सभी सम्बन्धों, जीवन के समस्त क्षेत्रों में यह दिव्यता परिलक्षित होनी चाहिए; प्रेम, करुणा, सहानुभूति, उदारता, नि:स्वार्थता एवं सेवा-भाव से आपका सम्पूर्ण जीवन ओत-प्रोत होना चाहिए। इसमें कुछ भी अदिव्य नहीं होना चाहिए। इसलिए, दिव्य जीवन, आपके सम्पूर्ण जीवन को, उसके सभी पक्षों सहित दिव्य बनाना है। आप यह नहीं कह सकते हैं, ''मैं दिव्य जीवन व्यतीत कर रहा हूँ क्योंकि मैं भगवन्नाम का जप करता हूँ और गीता-उपनिषद् का स्वाध्याय करता हूँ।'' परन्तु आप अपनी दुकान में, अपने व्यवसाय में क्या कर रहे

हैं? आप कहते हैं, ''इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता है। मैं कालाबाजारी करता हूँ, मैं झूठ बोलता हूँ, अपने ग्राहकों को धोखा देता हूँ। एक चिकित्सक अथवा वकील के रूप में भी, मैं कई अनाध्यात्मिक-अनैतिक कार्य करता हूँ। परन्तु इनसे कोई फर्क नहीं पड़ता है क्योंकि यह तो मेरा व्यावसायिक जीवन है। मैं दिव्य जीवन ही व्यतीत कर रहा हूँ क्योंकि दिव्य जीवन जप, ध्यान, स्वाध्याय करना ही है।'' दिव्य जीवन के विषय में यह धारणा सर्वथा गलत है। जब तक आपका सम्पूर्ण जीवन दिव्यतापूर्ण नहीं है, आप दिव्य जीवन नहीं जी रहे हैं।

केवल वही जीवन आपका उत्थान कर सकता है, जो सम्पूर्ण रूप में दिव्य हो। अन्यथा यदि आपके जीवन के एक छोटे अंश में आप दिव्य कर्म करते हैं, और शेष सारे जीवन में अधार्मिक-अनैतिक कर्म करते हैं, तो आप अपने जीवन में एक विरोधाभास की स्थिति उत्पन्न कर देते हैं। आप एक-साथ, एक समय पर दो कार्य कर रहे हैं। परन्तु इसमें एक कार्य दूसरे को निरस्त कर देगा, निष्फल कर देगा। आप थोड़े समय प्रार्थना-उपासना करके स्वयं के उत्थान का प्रयास करते हैं, परन्तु जीवन के अधिकांश समय की जाने वाली आपकी अनैतिक क्रियाएँ आपको नीचे खींच लेती हैं, आपको पतन की ओर ले जाती हैं। इस प्रकार आप अपना उत्थान कैसे कर पायेंगे? आपके सम्पूर्ण व्यवहार एवं जीवन में परिवर्तन घटित होना चाहिए।

आपकी समस्त क्रियाओं-कार्यों का अध्यात्मीकरण होना चाहिए। इसलिए दिव्य जीवन का प्रमुख सिद्धान्त है कि सब प्रकार के झूठ का त्याग करके सच्चाई एवं ईमानदारी का अभ्यास करना। यह दिव्य जीवन का प्रथम सिद्धान्त है। स्वयं से पूछें, ''क्या मैं अपने कार्य-व्यवहार में सत्य का पालन करता हूँ? क्या मैं ईमानदार हूँ? क्या मैं दिव्य जीवन के प्रथम सिद्धान्त 'सत्यनिष्ठा' का अभ्यास कर रहा हूँ? द्वितीयत:, दिव्य जीवन का अर्थ दूसरों के दु:ख-कष्ट को दूर करना तथा उन्हें सुख एवं प्रसन्नता देना है। जो दूसरों के कष्ट-पीड़ा को देखकर अप्रभावित रहता है, उनके कष्ट को दूर करने का प्रयास नहीं करता है, वह दिव्य जीवन नहीं जी रहा है। क्योंकि वह दिव्य जीवन के दूसरे सिद्धान्त 'अहिंसा' का पालन नहीं कर रहा है। केवल दूसरों को चोट नहीं पहुँचाना, उन्हें दु:ख नहीं देना ही अहिंसा नहीं है। अहिंसा का अर्थ दूसरों के दु:खों को दूर करना भी है। यदि आप अन्य व्यक्तियों की पीड़ा-दु:ख को देखकर चुप ही रहते हैं, उसे दूर करने का प्रयत्न नहीं करते हैं, तो आप उनके दु:ख-कष्ट में वृद्धि ही करते हैं। भगवान् ने आपको कुछ शक्ति-सामर्थ्य प्रदान किया है, अत: दूसरों के कष्टों को कम करने के लिए यथासम्भव प्रयास करें। यदि आप ऐसा नहीं करते हैं, तो आप अहिंसा का पालन नहीं कर रहे हैं। अहिंसा का अभिप्राय वैश्विक प्रेम है, सबके प्रति करुणा का भाव है। अहिंसा का पालन करने वाला व्यक्ति दूसरे के दु:खों-कष्टों को देख नहीं सकता है क्योंकि वह उनसे एकत्व अनुभव करता है। जब दूसरे कष्ट का अनुभव करते हैं, तो वह भी पीड़ित होता है। इसलिए दूसरों के दु:खों को अपना मानते हुए उनकी सहायता हेतु कार्य करें। यह 'अहिंसा' दिव्य जीवन के महान् सिद्धान्तों में से एक है। आपको परोपकारी बनना चाहिए। परोपकार का भाव अहिंसा में निहित है। अहिंसा वैश्विक प्रेम है और परोपकार इस प्रेम का क्रियान्वित रूप है। इसलिए जो मनुष्य दिव्य जीवन व्यतीत करने का प्रयास कर रहा है, वह स्वयं में वैश्विक प्रेम एवं करुणा का विकास भी करेगा । वह अपनी वाणी पर भी नियन्त्रण रखेगा। वह अन्य व्यक्तियों का अपमान नहीं करेगा, उन्हें अपशब्द एवं कटु शब्द नहीं बोलेगा। क्रोधपूर्ण, कटु एवं अभद्र वचनों का त्याग भी अहिंसा का भाग है। मधुर वचनों, दया एवं प्रेमपूर्ण वचनों

का अभ्यास करना दिव्य जीवन है। मित्रता, भ्रातृत्व एवं स्नेह से पूरित वाणी द्वारा दूसरों को शान्ति एवं सुख देने से ही, मनुष्य वस्तुत: दिव्य जीवन व्यतीत करता है। अत: आपके वचन कोमल एवं मृदु होने चाहिए जो दूसरों को शान्ति, सान्त्वना एवं सुख दे सकें।

दिव्य जीवन का अर्थ मन, वचन एवं कर्म की पवित्रता भी है। गृहस्थ जीवन में इसका अर्थ एकपत्नीव्रत है। इसका पालन करने वाला व्यक्ति सम्पूर्ण मानवता को पवित्र दृष्टि से देखता है। भगवान् राम और देवी सीता एक दिव्य दम्पत्ति के रूप में भारत के दिव्य पारिवारिक गृहस्थ जीवन का उज्ज्वल आदर्श प्रस्तुत करते हैं। भगवान् राम की दृष्टि में देवी सीता के अतिरिक्त अन्य सभी स्त्रियाँ मातृवत् हैं। क्योंकि वे एक पत्नीव्रत का पालन करते थे। वे कहते थे, ''मेरे लिए केवल एक ही स्त्री है जिसका मैंने अग्निदेव एवं अन्य वरिष्ठ जनों की साक्षी में पाणिग्रहण किया है। अन्य सभी स्त्रियाँ मेरी माता के समान हैं। मैं उन सबका मातृवत् सम्मान करता हूँ।'' यह गृहस्थ जीवन का आदर्श है। इसी प्रकार एक पवित्र स्त्री के हृदय में पतिव्रता-भाव होना चाहिए। अपने पति के अतिरिक्त, अन्य समस्त जगत् के प्रति उसका मातृभाव होना चाहिए। उसे यही अनुभव करना चाहिए, ''मैं भगवती महालक्ष्मी, भगवती महासरस्वती अथवा भगवती पार्वती का अंश हूँ। इसलिए समस्त मानवता मेरी सन्तान है। मेरे लिए केवल एक ही पुरुष है। वे मेरे पति हैं जिनको मैंने अग्निदेव एवं अन्य वरिष्ठ जनों की साक्षी में अपना स्वामी स्वीकार किया है। हम दोनों आध्यात्मिक जीवन साथ-साथ जीने हेतु एक-दूसरे के आध्यात्मिक सहचर बने हैं।'' इस प्रकार गृहस्थ जीवन में पवित्रता, दिव्य जीवन के मूलभूत सिद्धान्तों में से एक है। यहाँ पवित्रता का अर्थ केवल शारीरिक सम्बन्धों की पवित्रता नहीं, अपितु विचारों एवं दृष्टिकोण की पवित्रता भी है। सत्य, अहिंसा एवं ब्रह्मचर्य—ये दिव्य जीवन के तीन सिद्धान्त हैं। अहिंसा का अर्थ विश्व-प्रेम है। किसी से घृणा नहीं करना, किसी के प्रति क्रोध नहीं करना अहिंसा है। किसी को हानि नहीं पहुँचाना, किसी के प्रति वैर-भाव नहीं रखना अहिंसा है। सबके प्रति मैत्री-भाव रखना अहिंसा है।

यदि आप श्रीमद्भगवद्गीता के बारहवें अध्याय का, विशेषतया इसके अन्तिम आठ श्लोकों का अध्ययन करेंगे तो आप जानेंगे कि भगवान् श्री कृष्ण ने कितने अद्भुत एवं सुन्दर रूप में यह बताया है—दिव्य जीवन व्यतीत करने वाला मनुष्य कैसा होता है, सच्चा भगवद्भक्त कौन है, उसका स्वभाव कैसा होता है, वह कैसा व्यवहार करता है, उसका अपने आस-पास के परिवेश, अपने जीवन के प्रति कैसा दृष्टिकोण होता है, उसका आचरण कैसा होता है आदि। दिव्य जीवन, सत्य, वैश्विक प्रेम एवं दिव्यता से परिपूरित जीवन है। यह नि:स्वार्थता एवं सेवा का जीवन है। क्योंकि मानव-स्वभाव का मूलभूत दोष स्वार्थ है। स्वार्थ के कारण ही मनुष्य उच्च आध्यात्मिक आदर्शों को भूल जाता है और बुरे कर्म करता है। यदि आप मानव-स्वभाव के इस मौलिक दुर्गुण पर विजय प्राप्त करना चाहते हैं, तो आपको नि:स्वार्थता का अभ्यास करना होगा। नि:स्वार्थता को अपने कार्य-व्यवहार में अभिव्यक्त करना होगा। नि:स्वार्थता द्वारा ही स्वार्थ पर विजय प्राप्त की जा सकती है। अहंकार रहित होकर सबकी सेवा करना, नि:स्वार्थता के अभ्यास की विधि है। आपको यह नहीं कहना चाहिए, ''मैं यह सेवा कर रहा हूँ'', अपितु यह कहना चाहिए, ''मैं भगवान् के हाथों का एक उपकरण मात्र हूँ। सेवा करना मेरे लिए महान् सौभाग्य का विषय है।'' इस प्रकार अहंकार एवं स्वार्थ रहित होकर, नाम, यश एवं प्रशंसा की कामना किये बिना सेवा करना, नि:स्वार्थ सेवा कहलाती है। ऐसी सेवा में निरन्तर संलग्न रहें।

घर में अपने बड़ों की सेवा करें। माता-पिता की सेवा करें। पड़ोसियों की सेवा करें। समाज की सेवा करें। निर्धनों, रोगियों एवं दु:खीजनों की सेवा करें। अपरिचितों की भी सेवा करें। सेवा को केवल अपने सम्बन्धियों-परिचितों तक सीमित न रखें। आपको उन व्यक्तियों की भी सेवा करनी चाहिए जिनका आपके प्रति व्यवहार अच्छा नहीं है। इस प्रकार विनम्रतापूर्वक एवं स्वार्थरहित होकर निरन्तर सेवा करते रहने से व्यक्ति का स्वभाव शुद्ध होता है। इससे आपके मूलभूत दुर्गुण स्वार्थ का पूर्णतया नाश होता है। नि:स्वार्थता एवं सतत सेवा से पवित्र हुए हृदय में, भगवद्कृपा का अवतरण होता है, उसमें भगवदीय प्रकाश आलोकित होता है। यह प्रकाश व्यक्ति के हृदय में भगवान् के प्रति भक्ति के रूप में, उन्हें प्राप्त करने की इच्छा के रूप में प्रकट होता है। एक पवित्र हृदय में ही भगवद्-भक्ति का उद्भव होता है। स्वार्थ के मल से रहित हृदय में ही, भगवद्-उपासना एवं भगवद्-प्राप्ति की इच्छा जाग्रत होती है। नि:स्वार्थता के अभ्यास द्वारा, भगवान् के प्रति आपकी भक्ति में निरन्तर वृद्धि होगी। इस प्रकार भगवद्-भक्ति, भजन एवं उपासना, दिव्य जीवन जीने के स्वाभाविक फल हैं। जब भगवान् के प्रति आपकी भक्ति एवं प्रेम गहन हो जाते हैं, तो उनकी उपासना-आराधना की इच्छा एवं उन्हें प्राप्त करने की इच्छा ही आपकी सर्वप्रमुख इच्छा बन जाती है। अन्य सभी इच्छाएँ गौण हो जाती हैं। अब आप केवल भगवद्-प्राप्ति के लिए ही जीवन जीने लगते हैं। आप धीरे-धीरे अपने अन्तरतम की गहराई में प्रवेश करने लगते हैं और भगवान् से सतत जुड़े रहने का प्रयास करने लगते हैं। इस प्रकार आप ध्यान का अभ्यास प्रारम्भ कर देते हैं।

प्रतिदिन प्रात: एवं सायं नियमित रूप से ध्यान का अभ्यास करें। सभी विचारों को छोड़ दें, शान्त हो जायें। जगत् को पूर्णतया भूल जायें। शरीर को भूल जायें। केवल और केवल भगवद्-तत्त्व के प्रति जाग्रत रहें। इस प्रकार के नियमित ध्यान द्वारा, भगवान् के साथ गहन रूप से सतत जुड़े रहने से अन्तत: भगवद्-साक्षात्कार की उपलब्धि होती है। परम ज्ञान का उदय होता है। आपके वास्तविक स्वरूप के सम्बन्ध में आपका अज्ञान दूर हो जाता है। अब माया आपको प्रभावित नहीं कर सकती है। आप ज्ञान के प्रकाश से परिशुद्ध हो जाते हैं, प्रबुद्ध हो जाते हैं और आपका हृदय आनन्द से परिपूर्ण हो जाता है।

दिव्य जीवन आपके सम्पूर्ण जीवन का रूपान्तरण है। यह आपके व्यक्तित्व का स्वार्थ एवं असत्य से पूर्णतया मुक्त होना है। यह केवल वनों, पर्वतीय शिखरों अथवा गुफाओं में व्यतीत किया जाने वाला जीवन नहीं है। दिव्य जीवन आपके दिन-प्रतिदिन के सामान्य जीवन को दिव्य रूप में जीना है। इसलिए दिव्य जीवन के सिद्धान्त 'सत्य, पवित्रता, वैश्विक प्रेम एवं नि:स्वार्थता' आपके जीवन के अभिन्न अंग बन जाने चाहिए, चाहे आप एक व्यवसायी हों, चिकित्सक अथवा वकील हों, शिक्षक अथवा इंजीनियर हों। दिव्य जीवन का अभिप्राय आपकी दैनिक सामान्य क्रियाओं का अध्यात्मीकरण करना है। यह तभी सम्भव है जब समस्त कार्य इस जाग्रति के साथ किये जायें कि भगवान् सर्वत्र हैं, वे अभी और यहीं हैं तथा वे हमारे सभी कार्यों-गतिविधियों को देख रहे हैं। उनसे कुछ छिपाया नहीं जा सकता है। वे हमारे शाश्वत आन्तरिक साक्षी हैं। इसलिए हमें अपने समस्त कार्य उनके चरणों में पुष्पाञ्जलि-स्वरूप अर्पित करने चाहिए। भगवान् से निरन्तर कहते रहें, ''मैं जो-कुछ कार्य करता हूँ, अपने जिन विशिष्ट कर्तव्यों का पालन करता हूँ, वे सब आपके चरणों में महापूजा, अखण्ड पूजा के रूप में समर्पित करता हूँ।'' इसका परिणाम क्या होता है? जब आप सभी कर्तव्य-कर्म आराधना के भाव से करते हैं, तो ये सभी कर्म पवित्र कर्म

बन जाते हैं। आप जहाँ कहीं भी हों, वास्तव में आप भगवान् के मन्दिर में हैं। आपका कार्य-व्यवसाय का क्षेत्र भी आपके लिए भगवद्-उपासना का स्थान ही है। इस प्रकार, भगवान् की सर्वत्र विद्यमानता का अनुभव करते हुए आप अपने सभी कार्य करते हैं और उन्हें भगवद्-चरणों में अर्पित करते हैं। इससे आपके सभी कार्यों का अध्यात्मीकरण हो जाता है। ये कर्म भगवान् से जुड़े हैं, इसलिए यौगिक कर्म बन जाते हैं। अब ये लौकिक अथवा व्यावहारिक कर्म नहीं हैं। ये आपकी साधना का भाग बन जाते हैं। अतः, अपने सभी कार्यों को भगवान् की पूजा मानकर करते हुए अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करें। यही दिव्य जीवन है। केवल तभी आप अपने घर को ही कैलाश अथवा वैकुण्ठ बना सकते हैं।

आपको अपने घर में भगवान् की दिव्य सन्निधि का अनुभव करना चाहिए। परिवार के सभी सदस्यों को, स्वयं को भगवान् के सेवक अथवा उनके मन्दिर के पुजारी मानना चाहिए। प्रतिदिन सबको घर में स्थापित मन्दिर में एक-साथ बैठकर प्रार्थना, भजन, ध्यान तथा सद्ग्रन्थों एवं सन्तों के जीवन-चरित का अध्ययन करना चाहिए। परिवार एक श्रेष्ठ इकाई है क्योंकि इसमें आप सब प्रेम के बन्धन में बँधे होते हैं। इसलिए, सम्पूर्ण परिवार को एक-साथ दिव्य जीवन व्यतीत करने का प्रयास करना चाहिए।

विनम्र एवं सरल बनें। दूसरों का सम्मान करें परन्तु अपने सम्मान की अपेक्षा न करें। भगवान् के चरणों में अपने अहंकार को समर्पित करें। स्वयं को श्रेष्ठ नहीं मानें, भगवान् का सेवक मानें। भगवान् सम्पूर्ण मानवता में व्याप्त हैं। इसलिए, उनकी सन्तान की सेवा करना अपना सौभाग्य समझें। दूसरों से किसी प्रकार की आशा-अपेक्षा न करें। आपको जीवन में जो भी अनुभव प्राप्त होते हैं, उनका अपना मूल्य एवं महत्ता होती है। वे आपको कुछ शिक्षा देते हैं और आपके जीवन में ज्ञान का प्रकाश लाते हैं। इसलिए, जीवन के प्रत्येक अनुभव एवं परिस्थिति में मन की समता को बनाये रखें।

भगवद्-प्राप्ति के लिए दृढ़-संकल्पित हों। अपने इस लक्ष्य के प्रति निरन्तर अग्रसर होते रहें। यही दिव्य जीवन है। इस प्रकार का जीवन कहीं भी व्यतीत किया जा सकता है। क्योंकि इसमें जीवन के मुख्य उद्देश्य को परिवर्तित किया जाता है, अपने आन्तरिक दृष्टिकोण को पवित्र किया जाता है। अब आप यह अनुभव करने लगते हैं कि आप सदैव भगवान् के सान्निध्य में हैं, और इस कारण आपकी जीवन के प्रति दृष्टि पूर्णतया बदल जाती है। जो मनुष्य दिव्य जीवन व्यतीत करता है, उसके लिए जीवन धन एकत्रित करने एवं सुख-भोग करने का अवसर नहीं अपितु भगवद्-प्राप्ति का एक महान् अवसर होता है। वह सदैव अपने जीवन को एक नवीन दृष्टिकोण से देखने तथा इसे दिव्यता से ओत-प्रोत करने हेतु प्रयास करता है।

भगवान् ही आपके जीवन के सर्वोच्च लक्ष्य होने चाहिए। केवल उनकी प्राप्ति के लिए ही जीवन जियें। दिव्य जीवन जियें। दिव्य ऐसा जीवन है जिसमें आपके समस्त विचार, भावनाएँ, शब्द एवं कार्य दिव्य होते हैं। आपके जीवन एवं व्यवहार में किसी प्रकार की कोई आसुरी सम्पदा नहीं होती है। आसुरी सम्पदा, दिव्य जीवन के विपरीत होती है।

श्रीमद्भगवद्गीता के सोलहवें अध्याय को पढ़ें जहाँ भगवान् श्री कृष्ण हमें दैवी एवं आसुरी सम्पदा के विषय में बताते हैं। अच्छी तरह से समझें कि दैवी गुण कौनसे हैं एवं आसुरी गुण कौनसे हैं, इसके पश्चात् अपने अन्तःकरण का निरीक्षण करें। आत्म-परीक्षण करें कि आपके भीतर कौनसी आसुरी सम्पदा है, कौनसे दुर्गुण हैं? यदि आपके अन्तःकरण में आसुरी सम्पदा है, तो आप दिव्य जीवन नहीं जी रहे हैं। आत्म-निरीक्षण, दिव्य जीवन

का एक अंग है। अपने भीतर आसुरी तत्त्वों अर्थात् दुर्गुणों को खोजना, उनका निराकरण करना तथा सद्गुणों का विकास करना दिव्य जीवन जीने हेतु आवश्यक है। प्रतिदिन रात्रि को सोने से पूर्व शान्तिपूर्वक बैठें और आत्म-निरीक्षण करें, ''मैंने प्रात:काल से लेकर अब तक कैसा कार्य-व्यवहार किया है? मैंने ऐसे कितने कार्य किये हैं अथवा वचन बोले हैं जो दिव्यता के विपरीत हैं? अपने स्वभाव के इन दुर्गुणों का नाश मुझे किस प्रकार करना है?'' इस प्रकार प्रतिदिन आपको आत्म-परीक्षण करना चाहिए। आपको दिव्य जीवन में निरन्तर प्रगतिशील रहना चाहिए। यदि आप अपने भीतर किन्हीं दुर्गुणों को देखते हैं, तो उन्हें दूर करने के लिए प्रयासशील बनें।

भगवान् श्री कृष्ण द्वारा श्रीमद्भगवद्गीता में उल्लिखित सद्गुणों की एक सूची बनायें और उन सद्गुणों का स्वयं में विकास करने हेतु प्रयत्न करें। अपने जीवन के सभी क्षेत्रों में दिव्यता का अधिकाधिक विकास करें। यही दिव्य जीवन है। गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की 'विश्व-प्रार्थना' को कण्ठस्थ करें। इसमें श्री गुरुदेव ने दिव्य जीवन की रूपरेखा प्रदान की है। यदि आप इस प्रार्थना का ध्यानपूर्वक अध्ययन करेंगे, तो आपको दिव्य जीवन के विषय में एक स्पष्ट अवधारणा मिलेगी। यदि आप इस प्रार्थना को हृदयंगम करते हैं और अपने दैनिक जीवन में इसका अभ्यास करते हैं, तो आपका जीवन 'दिव्य जीवन' बन जायेगा।

सार रूप में कहा जाए तो यही कहना है, स्वयं का निरीक्षण करें, अपने आन्तरिक उद्देश्यों का विश्लेषण निष्पक्षतापूर्वक करें। आपके भीतर जो आसुरी सम्पदा है, दुर्गुण हैं, उनका समूल नाश करें। सद्गुणों का विकास करें। भगवान् का सतत स्मरण करें। अपने सभी कार्य भगवद्-आराधना मान कर करें और अन्त में, उन्हें भगवान् के चरणों में अर्पित कर दें। सद्गुण रहित जीवन, दिव्य जीवन नहीं है। श्री गुरुदेव को अपनी एक रचना 'अठारह सद्गुणों का गीत' (Song of Eighteen ities) विशेष प्रिय थी जिसकी प्रतिलिपि वे प्राय: वितरित करते थे। इसमें उन अठारह सद्गुणों का उल्लेख है जिनका विकास प्रत्येक व्यक्ति को करना चाहिए। यह उनके नाम-संकीर्तनों में से एक संकीर्तन भी है। यह गीत इस प्रकार है—

''श्री राम जय राम जय जय राम
श्री राम जय राम जय जय राम
प्रशान्तता, नियमितता, गर्वहीनता
निष्कपटता, सरलता, सत्यनिष्ठता
समता, दृढ़ता, अविक्षुब्धशीलता
समायोजनशीलता, विनम्रता, अध्यवसायिता
न्यायनिष्ठता, उदारचित्तता, विशालहृदयता
दानशीलता, उदारता, पवित्रता।
नित्य अभ्यास करें इन अठारह सद्गुणों का
शीघ्र ही आप प्राप्त करेंगे अमरता।
दर्शन करें आप विविधता में एकता के
निवास आप करेंगे शाश्वत अनन्तता में।
ब्रह्म ही एकमात्र वास्तविक सत्ता।
श्रीमान् अमुक-अमुक है मिथ्या सत्ता।
यह ज्ञान नहीं प्राप्त होता विश्वविद्यालय में।''

मात्र पुस्तकों के अध्ययन से आप इन सद्गुणों को प्राप्त नहीं कर सकते हैं, अपने जीवन में इनका अभ्यास करने से ही आप इनसे सम्पन्न हो सकते हैं। विश्वविद्यालय भी आपको ये समस्त सद्गुण नहीं दे सकते हैं। इसलिए दिव्य जीवन जियें और इसी जन्म में भगवद्-साक्षात्कार करें। इसे स्थगित मत करें।

हरि ॐ तत् सत्।

(अनुवादिका : स्वामी गुरुवत्सलानन्द माता जी)

स्वामी शिवानन्द तथा आध्यात्मिक नवजागरण

परम पावन श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज

हमारा निवास-स्थल यह संसार भौतिक तत्त्व का एक घनीभूत पुंज माना गया है। यहाँ तक कि हमारे अपने शरीर यान्त्रिक नियमों से संचालित होने वाले भौतिक प्रकृति के अंश के रूप में देखे जाते हैं। यह यान्त्रिक नियम ही आज एकमात्र सत्य प्रतीत होता है। आज विशेषत: विज्ञान-जगत् में यह एक सामान्योक्ति हो गयी है कि जीवन अत्यन्त सुनिश्चित रूप में कार्य-कारण के उस सिद्धान्त द्वारा निर्धारित है, जो संसार की सम्पूर्ण परियोजना पर शासन करता है। हमें बताया जाता है कि सत्ता के भौतिक तत्त्व, प्राण एवं मनस् आदि क्षेत्रों में जिस भिन्नता की प्राप्ति की अपेक्षा की जाती है, वह सतही है तथा उनका विचार भौतिक तत्त्व के प्रकटीकरण तथा प्रसारण की सूक्ष्मता के क्रमिक स्तर के अनुसार होता है। यहाँ तक कि विज्ञान द्वारा परिकल्पित विश्व-यन्त्र के नियमों को चुनौती देती प्रतीत होने वाली मानव-शरीर की संघटना की व्याख्या भी, सभी वस्तुओं के आधारभूत उपादान, भौतिक तत्त्व की पाशविक शक्ति की विविध-रूपी सक्रियता का एक रूप मात्र कह कर दी गयी है।

इस प्रकार के सिद्धान्त का प्राकृत परिणाम यह आश्चर्यजनक निष्कर्ष है कि विश्व के अन्य भौतिक उपादानों की भाँति मानव-जीवन पूर्णतया कार्य-कारण के विवेक-शून्य सिद्धान्तों से निर्धारित है एवं मानव की तथाकथित स्वतन्त्र इच्छाशक्ति यदि केवल एक कपोलकल्पना नहीं है तो उनकी वशवर्तिनी ही है। हमारे यह प्रतिवाद करने पर कि मनुष्य मात्र भौतिक तत्त्व ही नहीं, अपितु मनस् भी है—यह समझाया जाता है कि मनस् भी भौतिक तत्त्व की शक्तियों के सूक्ष्म और वायव्य निस्रवण के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। मनुष्य के सुख-दु:ख से उदासीन, निर्ममतापूर्वक अपने नियमों द्वारा कार्य करने वाली ब्रह्माण्ड की विराट् यन्त्रावली में मानव एक नगण्य कणिका के रूप में ह्रस्व हो गया है।

जीवन की यह प्रकृतिवादी व्याख्या, जिसके इस वैज्ञानिक तथा परमाणविक युग में शीघ्र ही निरंकुश हो उठने की आशंका है, वास्तव में सामान्य भोले-भाले विश्वासशील व्यक्तियों तथा उस बुद्धिजीवी जनता का दर्शन प्रतीत होती है, जिनमें मानव-अनुभूति की महत्तर गहराइयों की थाह लेने का न धैर्य है, न अवकाश है और न उसे समझने के साधन ही। स्थूल भौतिकवाद के इस सिद्धान्त के साथ-ही-साथ है, कम-से-कम प्रयास और चेष्टा-स्वरूप अधिकाधिक आराम और सुख-चैन-प्राप्ति की एक धुन तथा इस प्रकार की एक अन्तर्निष्ठ भावना कि पराकाष्ठा पर पहुँची भौतिक उन्नति ही अस्तित्व का चरम लक्ष्य होना चाहिए। इस सिद्धान्त की क्षमता और औचित्य में एक विवेकहीन विश्वास के कारण सांसारिक मनुष्य आज नैतिक मूल्यों की भ्रष्टता, मानसिक जीवन तथा वर्तमान शिक्षा-स्तर के पतन तथा जीवन के प्रति एक ऐसे दृष्टिकोण के कारण अपनी समृद्धि और भौतिक आधिपत्यों के होते हुए भी मन की अशान्ति और

स्वामी शिवानन्द जन्म शताब्दी स्मृतिग्रन्थ १९८७ से उद्धृत आलेख

परम श्रद्धेय गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के पुण्यतिथि आराधना दिवस की ६०वीं वर्षगाँठ

एकरसता (ऊब) की अनुभूति को भूल गया है—ऐसा प्रतीत होता है।

मानव निष्करुण जगत् के नियतिवादी यन्त्र का एक निरीह दन्तचक्र मात्र नहीं है, प्रत्युत् उसकी सत्ता सार्वभौम आत्मा का सह-विस्तारी एवं सह-शाश्वत आध्यात्मिक तत्त्व है—इस तथ्य को भौतिकवादियों द्वारा किये गये अत्यन्त असन्तोषजनक एवं प्रभावहीन प्रचार की प्रतिक्रिया के रूप में, अनेकों ने सहज ही अनुभव किया था। मनुष्य भौतिक प्रकृति से आपूर्ण है, इस चरम सीमा तक पहुँची हुई भौतिकवादी धारणा की ओर से मुड़ कर निर्णायक तुला उस आदर्शवाद की दूसरी चरम सीमा की ओर झुक गयी जो प्रतिपादन करता है कि मनुष्य ब्रह्माण्डीय आध्यात्मिक तत्त्व की प्रेरणा से विवशतापूर्वक इस ओर खिंचता है।

इन भौतिकवादी तथा आदर्शवादी सिद्धान्तों का भेद अन्ततः विश्व की संरचना और चरम तत्त्व की संकल्पना में प्राप्त होता है। एक के अनुसार, यह भौतिक तत्त्व, गति और शक्ति है। दूसरे का दृढ़ मत है कि यह विशुद्ध मनस् अथवा आत्मा है। परन्तु, दोनों ही यह स्वीकार करते हैं कि मनुष्य की अपनी कोई वास्तविक स्वतन्त्रता और विकल्प नहीं है; क्योंकि वह विश्व की चरम यथार्थता में, चाहे वह भौतिक हो, मानसिक हो अथवा आध्यात्मिक हो, अविमोचनीय रूप से आवेष्टित, तन्मय और लीन है। अभागे मानव ने अनुभव किया कि ऐसी परिस्थिति में उसके लिए सौन्दर्यपरक, धार्मिक एवं नैतिक मूल्यों के उपभोग का एक सामान्य जीवन व्यतीत करना तथा साथ-ही-साथ अपने चरणों को धरती माँ पर सुस्थापित अनुभव कर सकना कठिन था—उस समृद्धि, वैभव, प्रत्याशाओं, रहस्यों से युक्त धरती माँ पर जो आश्चर्यजनक निपुणता से मानव के ध्यान को आकृष्ट कर इंगित करती है कि जीवन निरन्तर सामना किये जाने वाले दृश्यमान संघर्ष, संकट और आपदाओं के होते हुए भी सत्य, शिव तथा सुन्दर है। फिर भी जीवन ही सब-कुछ नहीं है; दुःख, पीड़ा तथा मृत्यु, संसार की अशान्ति, जीवन के भाग्याधीन उतार-चढ़ाव, मानव की अनन्त इच्छाओं तथा उसके अन्तर में उमड़ती नैतिक आकांक्षाओं के द्वारा निरन्तर निर्दिष्ट कोई विस्मयोत्पादक एवं भीषण सत्य विद्यमान है। सांसारिक मनुष्य को आवश्यकता थी एक प्रेममय, सहानुभूतिपूर्ण, तर्कसंगत तथा सन्तोषजनक शिक्षा की, जो उसे व्यक्ति के रूप में अपने दैनिक कर्तव्यों का पालन करते हुए भी, उस अद्भुत तथा भव्य विश्वेतर के लिए आकांक्षा करते रहने की शक्ति दे जो उसे सदैव ही प्रकृति के लुब्ध करने वाले आवरणों से अपने पास बुलाने को इंगित करता प्रतीत होता है।

तीक्ष्ण बुद्धि लार्ड मैकाले के द्वारा प्रस्तुत कुशल योजना के अन्तर्गत शिक्षित विकासमान भारतीय युवकों के बहकाये हुए मन सरलता से पथ-भ्रष्ट हो सकते थे और जैसा कि आशा करना स्वाभाविक होगा, इन युवा व्यक्तियों के प्राचीन पूर्वजों के जीवन की पीढ़ियों से चलती आयी भव्यता तथा विद्वत्ता धीरे-धीरे लुप्त हो गयी तथा लोग आज के बहुचर्चित और लगभग चरमोत्कर्ष की अतिरंजित ऊँचाई तक उठाये गये तथाकथित आधुनिक चिन्तन, एक विचारशील दृष्टिकोण और जीवन के प्रति एक वैज्ञानिक मनोवृत्ति की लीक पकड़ कर चलने लगे। ऐसे अनेक व्यक्ति थे जो आध्यात्मिक सिद्धान्तों में सन्देह करने में तथा अतिभौतिक का खण्डन करने में आनन्दित

होते थे तथा आत्मा और परमात्मा की निन्दा करने की सीमा तक भी पहुँच गये थे।

विदेशी शासकों द्वारा नियोजित विधि सचमुच जादू की तरह कारगर हुई। आश्चर्यजनक था कि किस प्रकार हमारा उष्णरक्तीय युवा समाज अपनी निशंक आँखों के सामने ही प्रस्तुत किये गये व्यावहारिक विज्ञान के मोह एवं औद्योगिक क्रान्ति की उपयोगिता से अभिभूत हो उठा। सर्वसाधारण ने—अमर जीवन का गहनतम सत्य उद्घोषित करने के अधिकारी, अत्यधिक धार्मिक और आध्यात्मिक नायकों की क्रम-परम्परा की इन भोली-भाली सन्तानों ने अपने पूर्वजों की आध्यात्मिक विरासत को धीरे-धीरे त्याग कर, सगर्व एक ऐसी संस्कृति के अदृश्य जूए के नीचे इतराते हुए चलना आरम्भ किया जो उन पर गुप्त रूप से प्राप्त आधिपत्य की भावना से जुड़ी थी। साथ-ही-साथ सम्पूर्ण विश्व में, विशेष रूप से प्रथम विश्व-युद्ध के प्रभाव के उपरान्त एक सन्देहवादी दृष्टिकोण की प्रवृत्ति दिखायी पड़ी। बीसवीं शती के भौतिकी तथा प्राणी-विज्ञान के आविष्कारों द्वारा लायी क्रान्तियों तथा साथ ही, प्रत्येक वस्तु में तर्क की जबरदस्त माँग ने संकेत किया कि वे समस्त अच्छाई, विश्वास, नैतिकता, धर्म और आध्यात्मिकता पर सांघातिक प्रहार करेंगे, चाहे इन चिरसम्मानित मूल्यों के प्रति रूढ़िवादी विचारधारा कुछ भी हो। ऐसी परिस्थिति की माँग थी—समस्त मूल्यों का पुनर्मूल्यांकन तथा मानव के आन्तरिक जीवन का अपेक्षाकृत अधिक सुदृढ़ आधार पर निर्माण। जीवन के राजनीति, समाजशास्त्र, धर्म, योग, अध्यात्म आदि प्रमुख क्षेत्रों में, भ्रान्त मनों को सुधारने तथा सत्य, ऋत और नैतिकता की आवश्यकताओं को स्वर देने के लिए अप्रतिरोध्य आन्तरिक न्याय के अनेक प्रभावशाली तथा विश्वसनीय स्वर तत्काल उभर पड़े।

श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती ऐसे अग्रणी मार्गदर्शकों में विशिष्ट स्थान रखते हैं जो आधुनिक भारत में पूर्ण आन्तरिक परिवर्तन लाये तथा जिन्होंने महान् आध्यात्मिक मूल्यों को एक सुदृढ़तर आधार पर समुचित प्रतिवेश में स्थापित किया।

इस दार्शनिक सन्त का जीवन-ध्येय

जीवन की सम्पूर्ण संरचना में निहित इस उल्लेखनीय कमी, इस रिक्तता तथा मानव की महत्त्वाकांक्षी मन में इस त्रुटि को स्वामी शिवानन्द जी की सूक्ष्म दृष्टि ने देखा था। स्वामी जी के जीवन का ध्येय विश्व को एक ऐसी व्यापक दर्शन-पद्धति देने का रहा है जो दुराग्रही अनुभववाद की माँगों और उदात्त आदर्शवाद के सिद्धान्तों और उपदेशों (यथा 'केवल ब्रह्म ही सत्य है') में समन्वय तथा सन्तुलन स्थापित करती हो तथा जो पूर्णत्व-प्राप्ति हेतु बाह्य तथा आन्तरिक अनुशासन की संश्लिष्ट विधाओं की पद्धति प्रस्तुत करती हो।

अध्यात्मवादी अद्वैतवाद की तत्त्वमीमांसा के सिद्धान्त—कि ईश्वर के अतिरिक्त चरम सत्य कुछ नहीं है—के प्रति पूर्णत: विश्वस्त हो कर उसे स्वीकार करते हुए, उसके अनुभव की विस्मयकारक सत्यता में व्यक्तिगत रूप से प्रविष्ट होने के कारण श्री स्वामी शिवानन्द जी ने अज्ञानियों के विश्वास को बिना व्याघात पहुँचाये अथवा अस्त-व्यस्त किये तथा मानव-जीवन के प्रत्येक पक्ष को ध्यान में रख कर उन परिस्थितियों को विवेकपूर्वक सुलझाने की आवश्यकता अनुभव की, जिन परिस्थितियों से मानव-

मन अन्तर्ग्रस्त रहता है। हम सिखा नहीं सकते कि अनुभूति-क्षेत्र का जीवन ही जीवन है या भौतिक शरीर और पार्थिव जगत् ही अद्वितीय सत्य को संघटित करते हैं; क्योंकि चिन्तनशील प्रवृत्ति से ये तथ्य उभरने लगते हैं कि मनस् भौतिक पदार्थ-तुल्य नहीं हो सकता, कि प्रेम और प्रसन्नता विद्युदणु (एलेक्ट्रोन्स) और अणु (प्रोटोन्स) की गतियों के अनुरूप ह्रस्व होना अस्वीकार करते हैं, कि अज्ञात क्षेत्र तथा आध्यात्मिक मूल्यों के अनन्वेषित सत्य को जानने का दावा करने वाले और उनकी सत्ता को एवं अमरत्व जैसे तत्त्व की स्पष्ट सम्भावना घोषित करने वाले रहस्यवादियों तथा धार्मिक व्यक्तियों की अनन्त काल से चली आती अन्तहीन पुकार केवल रुग्ण जीवात्मा अथवा असामान्य प्रकृतियों के विकृत स्वर कह कर नहीं टाली जा सकती।

मिथ्याभिमानी मानव इस असाधारण उपदेश से सन्तुष्ट नहीं होता कि विश्व का अस्तित्व नहीं है; जिस सुख-दु:ख का वह उपभोग कर रहा है, वह मात्र मोह-भ्रम है; जीवन चेतना का प्रलाप है; बहुमूल्य मान्यताएँ जो आग्रह और उत्सुकता से अत्यन्त सावधानीपूर्वक संचित की गयी थीं, जीवन की रुग्णता के विषाद के दीर्घ-स्वप्न में निमग्न, भ्रमित मन की व्यस्त क्रियाएँ हैं आदि। उसकी अन्वेषक अनुभूतियाँ तथा जिज्ञासु-बुद्धि तीव्र रूप से प्रतिवाद करती हैं कि वे जगत् को उतना ही कठोर, स्थूल तथा वास्तविक देखती हैं जितनी कि कोई वस्तु हो सकती है; कि शरीर के अपने सुख-दु:ख की, जीवन के कर्तव्यों, दायित्वों, शोक-विषाद, विचित्रताओं तथा विशिष्ट अर्थवत्ता की किसी प्रकार के तर्क के बल पर उपेक्षा नहीं की जा सकती; अनुभव वास्तविक होता है, अत: कल्पना की खींचतान के द्वारा उसे महत्त्वहीन समझ कर निराकृत नहीं किया जा सकता; दृश्य वस्तु ही सत्य और मूल्यवान् है; क्योंकि प्रतिदिन के अनुभव द्वारा यह पर्याप्त रूप में परीक्षित है।

हम यह नहीं कह सकते कि ईश्वर ने जगत् की सृष्टि की है; क्योंकि ईश्वर में कोई इच्छा नहीं है जो उसे विश्व-सृजन के लिए प्रेरित करती है। हम यह भी नहीं कह सकते कि विश्व प्रभु की लीला है; क्योंकि पूर्ण ब्रह्म को लीला की आवश्यकता नहीं होती। हम यह भी नहीं कह सकते कि विश्व का कोई मूलाधार नहीं है; क्योंकि भौतिक प्रकृति के परिवर्तनशील रूप तथा मानव की अन्तरात्मा की नैतिक माँगें निश्चित रूप से सिद्ध करती हैं कि सृष्टि-नियन्ता को होना ही चाहिए।

जीवन एक साधना

स्वामी शिवानन्द जी ने स्वयं को जिस महत्त्वपूर्ण किन्तु दुष्कर कार्य की ओर उन्मुख किया था वह है - मानव को मनोभौतिक तत्त्व के एक विकासशील अवयवी के रूप में लेना, जो न तो भौतिक संसार की यान्त्रिकता द्वारा पूर्णत: प्रकृतिवादिता की दृष्टि से प्रतिबन्धित है और न अध्यात्मवादिता की दृष्टि से दिव्य अस्तित्व के लोकोत्तर लक्ष्य में निमग्न है। मानव देह, मन अथवा आत्मतत्त्व मात्र नहीं है; प्रत्युत् इन सभी तत्त्वों का ऐसा अद्‌भुत सम्मिश्रण है जिसे साधारण बुद्धि से नहीं समझा जा सकता। कठोपनिषद् कहता है कि वास्तविक भोक्ता अथवा ज्ञान और कर्म का व्यावहारिक कर्तापन आत्मन्, मनस् और इन्द्रियों की एक यौगिक (composit) संरचना है। जीवन नितान्त भौतिक तत्त्व का घूर्णित पुंज, परमाणुओं

का समूह, अणुओं का समुच्चय अथवा विद्युत् शक्तियों का भँवर-जाल, मनोविज्ञान अथवा अध्यात्मवाद के अध्ययन का विषय, तार्किक विचारों के जगत् में आदर्शवादी उड़ान, मानसिक प्रतिभास अथवा आत्मिक अनुभव मात्र नहीं है। विशुद्ध अध्यात्मवादी मान्यता या गुह्य (occultist) व्याख्या भी उस जीवन के रहस्य का स्पष्टीकरण नहीं कर सकती जो एक-साथ इन सभी सोपानों और स्तरों के कुछ विशिष्ट तत्त्वों के एक ही काल में संयोजन का एक अतिमानवीय कार्य प्रमाणित होता है।

मानव एक-साथ ही भौतिक देहधारी, तथा मानसिक एवं आध्यात्मिक सत्ता है। उसे केवल शारीरिक क्षुधा और प्राणिक तृषा को ही शान्त नहीं करना है; प्रत्युत् यदि अधिक नहीं तो समान मात्रा में अपनी चित्त-वृत्तियों (psychic nature), नैतिक प्रवृत्तियों तथा आध्यात्मिक आकांक्षाओं की माँगों पर भी ध्यान देना है। जीवन प्रकृति की विकासशील संरचना के विभिन्न स्तरों पर क्रमिक रूप से प्रव्यक्त शक्ति का संश्लेषण है। इस अर्थ में रहस्यमय मानव के लिए (जिसकी संरचना, अप्रतिरोध्य अवधान तथा प्रशिक्षण निम्नतम भौतिक पदार्थ से ले कर उच्चतम आत्मतत्त्व तक की श्रेणी की है) समग्र जीवन परिपूर्णत्व के लिए एक साधना तथा समग्र प्रयास है। शरीर के रूप में वह प्राकृतिक शक्तियों का जीव है जो भौतिक जगत् की समस्त मिश्रित संरचना पर शासन करने वाले दु:ख और मर्त्यता के अधीन है।

विशुद्ध भौतिक संरचना के रूप में लें तो वह जड़ पदार्थ की कोटि में आता है; परन्तु उसकी कथा यहीं समाप्त नहीं होती। वह पौधे की तरह विकसित होता है, पशु की तरह अनुभव एवं प्रतिक्रिया करता है तथा जहाँ तक भोजन, निद्रा और मैथुन की लालसा का सम्बन्ध है, वह मूक साम्राज्य के निवासियों से भिन्न नहीं है; परन्तु मानव पशुराज्य से ऊपर उठने का संघर्ष करता है, अपनी नैतिक चेतना का (जिसका पशुओं में नितान्त अभाव है) प्रयोग करता है तथा सद्-असद्, उचित-अनुचित, भले-बुरे और सुन्दर-असुन्दर के अन्तर को पहचानने में अपनी अद्भुत विवेकशक्ति और तर्क-क्षमता को दिखाता है। इस प्रकार मानव इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि जड़-जगत्, वनस्पति-क्षेत्र तथा अध:मानवीय-क्षेत्र में दृष्टिगोचर होने वाले भौतिक तत्त्व, जीवन और मनस् को अपने में निहित करके भी, वह इनसे महत्तर है तथा इन सब तत्त्वों को अपने व्यक्तित्व में समाविष्ट करते हुए भी, वह आश्चर्यजनक रूप से इन सबसे अधिक श्रेष्ठ है। अत: विविध तत्त्वों को अंगीकार करते हुए, विरोधी गुणों को प्रदर्शित करते हुए तथा सत्य की विभिन्न कोटियाँ प्रव्यक्त करते हुए मानव-जीवन अत्यन्त जटिल है। यदि जीवन एक साधना है, एक सतत यात्रा-गति तथा सम-प्रकृति के विस्तृत ब्रह्माण्ड से निज के समञ्जन की कहानी है, तो यही पर्याप्त नहीं है कि हम चित्र के एक पक्ष की ओर ही देखें; प्रत्युत् मानव में दैवी प्रकाशन के प्रत्येक पक्ष पर हमें विचार करने की आवश्यकता है। श्री स्वामी शिवानन्द जी का ठीक यही जीवनोद्देश्य था। उनके लिए सम्पूर्ण जीवन योग था। उनका कृतित्व जीवन को समग्रता से जीने पर एक विशद शोध-निबन्ध है।

मानव की शिक्षा

मानवात्मा एक ऐसी चेतना से संघटित हुई है जो विशुद्ध सत्ता ही नहीं, प्रत्युत् वह गत्यात्मक प्रक्रिया है जो उन परिस्थितियों से सम्मिश्रित है जिनमें वह (सामाजिक

तथा राजनैतिक प्रतिबन्ध, नैतिक आदेश, भौतिक आवश्यकताएँ, जैविक आवेग, बौद्धिक परिस्थितियों आदि के परिवेश समेत) अपने को पाती है। दूसरे शब्दों में, मानव अपनी दैनिक क्रियाओं तथा दैनिक जीवन की समस्याओं में यह देखता है कि उसका जीवन परजीवन-सापेक्ष है और विश्व के परिवर्तन के संग ही उसमें परिवर्तन और विकास होता है। हमें स्मरण रखना है कि मानव-जीवन काल-सापेक्ष है, अत: लौकिक नियमों के अधीन है। मानवात्मा संसार में है, परन्तु सांसारिक नहीं है; अत: मानव-सम्बन्धी अध्ययन और कुछ नहीं, प्रत्युत् उन परिस्थितियों की समग्रता पर ही विचार करना है, जो मानव-ज्ञान की परिधि के अन्तर्गत आती हैं; फिर चाहे वे उतनी स्पष्ट हों जितनी वे दैनिक अनुभवों तथा भौतिक एवं मानसिकीय विज्ञानों में होती हैं अथवा अन्तर्निहित हों जैसे दर्शन में रहती हैं या फिर अभिव्यक्त हों जैसे धर्म में होती हैं। ऐसे अध्ययन को अपनी सम्पूर्ण सीमा तक जीवन की समस्त समस्याओं को—जहाँ तक वे मानव के महत्त्वाकांक्षी व्यक्तित्व को प्रभावित करती हैं—सम्मिलित करना है। मानव का केवल अस्तित्व ही नहीं है; अपितु वह चिन्तन करता है, अनुभव करता है, इच्छा करता है; अत: भगवान् के धार्मिक मूल्य, कर्तव्य के आचार-सम्बन्धी मूल्य तथा सत्य के तर्कसंगत मूल्य के प्रति उसका उपगमन दैनिक जीवन में यथासम्भव अनुभूत सत्य के तत्त्वों को निहित करते हुए उन्हीं तत्त्वों में से उद्भूत होना चाहिए।

स्वामी शिवानन्द जी ने मानव-जीवन को अज्ञान, इच्छा और क्रिया के जाल में जकड़े जीव के लिए शिक्षा की पाठशाला माना है। इस शिक्षा को इस प्रकार एक-साथ ही शारीरिक, बौद्धिक, भावात्मक, नैतिक, सक्रिय एवं आध्यात्मिक होना है, कि वह मानव की अपनी परिस्थितियों से भलीभाँति मेल खाती हो। इस शिक्षा की वास्तविक विधा विभिन्न व्यक्तियों के वयस, उनके स्वास्थ्य, व्यवसाय, विकास के स्तर, सामाजिक सम्बन्धों आदि के अनुरूप अपने विस्तार में भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है; क्योंकि विविध वर्णी जगत् में ये सभी तथ्य जीव का ध्यान आकर्षित करते हैं। तत्त्वत: शिक्षा की प्रत्येक योजना में (१) व्यक्तित्व के विकास, (२) संसार के ज्ञान, (३) स्वयं का समाज से समञ्जन तथा (४) चिरस्थायी मूल्यों की उपलब्धि को प्रभावित और सम्पादित करने वाली विधियाँ निहित होनी चाहिए।

व्यक्तित्व के विकास से तात्पर्य व्यक्ति-विशेष के ऐसे हितकारी निर्माण से है जो केवल शरीर, मन और चेतना की आन्तरिक अवस्थाओं के ही सन्दर्भ में नहीं, प्रत्युत् समाज के विभिन्न स्तरों द्वारा बाह्य जगत् तक पहुँचते हुए उससे भी सम्बन्धित है। इस अर्थ में सच्ची शिक्षा 'आन्तरिक अवगाहन' और 'बाह्य प्रसार' दोनों ही है। सांसारिक ज्ञान केवल तथ्यों का एक संग्रह अथवा भौतिक जगत्-विषयक सूचनाओं का संकलन मात्र नहीं है। यह मानव की आन्तरिक क्रियाओं में भी एक विशिष्ट अन्तर्दृष्टि, कम-से-कम उस सीमा तक तो अवश्य ही प्रदान करता है, जिस सीमा तक बाह्य और आन्तरिक जीवन उनके संग अविमोचनीय रूप में सम्बद्ध है। नयनाभिराम रंगों और विभिन्न गहराइयों के इस विश्व से आवेष्टित वैयक्तिकता और व्यक्तित्व का ज्ञान जब किसी को गहन अध्ययन, चिन्तन और गुरु-सेवा द्वारा प्राप्त हो जाता है, तब उसके लिए समाज से निज का समञ्जन स्थापित करने की कला को जानना सरल हो जाता है। सच

तो यह है कि यह समञ्जन उस व्यक्ति के लिए असम्भव है, जिसे मानवता की गहरी आध्यात्मिक प्रकृति का ज्ञान नहीं है। यह आध्यात्मिक प्रकृति ही है जो मानव के व्यावहारिक कार्यों में समाज का निर्माण करती है। व्यक्ति और उसी प्रकार समाज का भी ध्येय वैयक्तिक, सामाजिक, राजनैतिक और यहाँ तक कि सार्वभौम मूल्यों की उपलब्धि करना है, जो परस्पर सापेक्ष हैं और एक ही लक्ष्य द्वारा—जिसकी ओर वे ज्ञात-अविज्ञात रूप में उन्मुख हो रहे हैं—निश्चित होते हैं। यह भी सम्भव है कि अज्ञानी मनुष्य को पूर्णत: इनकी जानकारी न हो कि जीवन के शाश्वत मूल्यों का ईश्वर, मुक्ति, अमरत्व जैसी संव्यापक शब्दावली में समाहार कर दिया गया है और उसका समस्त दैनिक संघर्ष और कुछ नहीं, प्रत्युत् वह जो-कुछ देखता, सुनता और समझता है, उसके द्वारा इनको जानने और इनमें भाग लेने हेतु अज्ञानान्धकार में उसके स्वयं के मन द्वारा इनकी खोज है। इस तथ्य के प्रति मानव-चेतना को जाग्रत करना स्वामी शिवानन्द जी का प्रमुख जीवन-ध्येय रहा और उनका बृहद् साहित्य भोजन की खोज में भटकती क्षुधित आत्माओं को, जो ज्ञान के अभाव में उसे प्राप्त नहीं कर सकतीं, नाना रूप में तृप्ति प्रदान करता है।

उनकी रचनाओं की विशेषताएँ

स्वामी शिवानन्द जी की रचनाएँ प्रत्येक परिपार्श्व और प्रत्येक पक्ष से मानव के निकट पहुँचने की योजना के अनुसार विविध विषयों को निहित किये हुए हैं। ये रचनाएँ विभिन्न प्रसंगों का विस्तृत रूप में प्रतिपादन करती हैं—जैसे, शरीर-रचना-विज्ञान, शरीर-विज्ञान, आरोग्य-शास्त्र, स्वास्थ्य-रक्षा, व्यायाम, रोगों की प्राथमिक चिकित्सा, रोगोपचार, आसन-प्राणायाम, बन्ध-मुद्रा आदि (हठयोग की शास्त्रीय प्रक्रियाएँ जो शरीर को उष्णता और शीत, क्षुधा और तृषा जैसे प्रकृति के विरोधी द्वन्द्वों का सामना करने में समर्थ बना कर भौतिक शरीर के अनुशासन की जटिल विधियाँ हैं), अभ्यान्तर मानव के संयोजन, क्रिया-प्रणाली एवं व्यवहार—उसकी मानसिक, सांकल्पिक, भावनात्मक, नैतिक एवं विवेकपूर्ण प्रकृतियों (जो जीवन के मूल्यों को अखण्डित रूप से प्रभावित और निश्चित करती हैं) का मनोवैज्ञानिक विस्तृत विश्लेषण, मानव के कर्तव्य, परिवार, समाज और राष्ट्र से उसके सम्बन्ध, जगत् और ब्रह्माण्ड में उसका स्थान, उसके राष्ट्रीय-जागतिक सम्बन्ध, व्यक्तियों की सामाजिक, नीतिपरक एवं राजनैतिक संरचना, धार्मिक और आध्यात्मिक मूल्यों का निर्धारण, मानव-जीवन के चरम लक्ष्य की विशेषताओं की विस्तृत एवं मार्मिक विवेचना और साथ ही इस चरम लक्ष्य तक पहुँचने के मार्ग की विशेषताओं का गम्भीर निरूपण आदि। इन विषयों के प्रतिपादन में स्वामी शिवानन्द जी केवल विवेकी और वैज्ञानिक मानव को अथवा समाज की प्रतिभा को ही प्रभावित नहीं करते; प्रत्युत् धर्मपरायण, आस्थावान् और विश्वासी सामान्य वर्ग (जो उच्चतर नियमों से अपरिचित है), आध्यात्मिक जिज्ञासु, संन्यासी, गृहस्थ, वानप्रस्थ, व्यवसायी, स्त्री और बच्चे—सभी को समान रूप से प्रभावित करते हैं। उनकी रचनाओं का मनोयोगपूर्वक अध्ययन करने से विदित होगा कि वे हृदय और भावनाओं को अपेक्षाकृत अधिक प्रभावित करती हैं और उनकी शिक्षाएँ समाज के प्रत्येक वर्ग के दैनिक जीवन में प्रयोग किये जाने योग्य तथा अधिकांशत: व्यावहारिक हैं।

उनकी रचनाएँ यथार्थत: विविध योगों पर अति-विस्तृत प्रामाणिक सामग्री प्रस्तुत करती हैं यथा—

(१) ज्ञानयोग अथवा प्रकृति के रहस्यों को सुलझाने वाली विवेकशील एवं वैज्ञानिक बुद्धि की दार्शनिक विधा तथा ज्ञान, सत्य और ईश्वरीय नियमों के न्याय का जीवन व्यतीत करना।

(२) राजयोग अर्थात् मनस्-तत्त्व के अंगीभूत तत्त्वों का विश्लेषण, विच्छेदन एवं अवरोधन तथा मन के परिष्करण की मानसिक एवं रहस्यवादी विधि, जिसके द्वारा मानव इसकी (मन की) यन्त्रणाओं पर विजय प्राप्त करने की क्षमता प्राप्त कर आत्मा अथवा परमात्मा (पुरुष) की सार्वभौमिकता में अपनी स्थिति का परिज्ञान प्राप्त करने की ऊँचाई तक उठ जाता है।

(३) भक्तियोग अर्थात् विश्व के एकमात्र स्वामी, नियन्ता तथा अखिल सृष्टि के जनक करुणामय प्रभु के प्रति आध्यात्मिक प्रेम और भक्ति का मार्ग जिसके द्वारा मानव को माता-पिता, सन्तान, स्वामी, मित्र तथा दाम्पत्य के बन्धन में बाँधने वाले संवेग, उनकी (प्रभु की) सार्वभौम प्रकृति में केन्द्रित होने के कारण निर्मल और उदात्त हो जाते हैं।

(४) कर्मयोग अथवा आध्यात्मिक क्रियाओं का विज्ञान और कौशल; जीवन के भौतिक, मानसिक, नैतिक या आध्यात्मिक कर्म और कर्तव्यों को एवं व्यक्तित्व को प्रभु को समर्पण करके अथवा बाह्य और अभ्यान्तर क्रियाओं से अप्रभावित तटस्थ द्रष्टा-स्वरूप खड़े रहने पर—सर्वव्यापी ब्रह्म की सतत चेतना से संयुक्त करके उन्हें दिव्य योग में रूपान्तरित करने की अत्युत्तम रीति।

(५) हठयोग अर्थात् आन्तरिक अनुशासन और ध्यान के लिए उच्चतर योग के अभ्यास हेतु शरीर, नाड़ी-तन्त्र तथा प्राणशक्ति को अनुशासित करना।

(६) कुण्डलिनीयोग अर्थात् व्यक्ति में अन्तर्निहित प्रधान और उच्चस्तरीय तान्त्रिक-शक्ति को प्राण और मनस् के प्रशिक्षण द्वारा सक्रिय करना (जिसके सक्रिय होने पर प्रकृति के अजस्र भण्डार मानव के अधिकार में हो जाते हैं और वह अपनी उस चेतना में वैश्व चेतना से एकात्म कर लेता है)।

(७) मन्त्र, यन्त्र और तन्त्र-योग अर्थात् मानव को निम्न प्रकृति से मुक्त कर उच्चतर प्रकृति के क्षेत्र में अवस्थित करने हेतु सृजित विशेष ध्वनियों के प्रतीकों, सूत्रों, आरेखों तथा धार्मिक कृत्यों द्वारा अन्तर (जो उन्हें बाह्य से भी सम्बन्धित करता है) में आध्यात्मिक शक्ति और कम्पन-स्पन्दन उत्पन्न करने की नितान्त रहस्यमयी प्रक्रियाओं की विधि।

(८) जपयोग अर्थात् मानव की अभ्यान्तर प्रकृति में परिष्करण और सन्तुलन की स्थिति लाने के लिए प्रभु के नाम का अथवा कुछ विशेष वर्णों, शब्दों अथवा वाक्यों के जप का आध्यात्मिक अभ्यास।

(९) लययोग अर्थात् कार्यों के कारणों में अपगमन होने के द्वारा मन का आत्मा में विलय होना; स्थूलतर का सूक्ष्मतर में अवसान और इस प्रकार चेतना को निम्न धरातल से उच्चतर धरातल पर उठाना।

दुर्बल इच्छा-शक्ति के मानवों के लाभार्थ स्वामी शिवानन्द जी ने इन विभिन्न योगों को संश्लेषित करने में महान् कुशलता का परिचय दिया तथा जिज्ञासु-जगत् को आश्वासन दिया कि यदि प्रयास सच्चाई, दृढ़ता और धैर्य

पर आधारित है तो सफलता सुनिश्चित है।

स्वामी शिवानन्द जी की कार्य-प्रणाली

कहा जाता है कि आत्म-साक्षात्कार प्राप्त सन्त उस पारदर्शी विशुद्ध स्फटिक के समान होता है, जिसका अपना कोई रंग नहीं होता, परन्तु जो सन्निकट लायी गयी वस्तु की ही झलक ग्रहण कर लेता है। उससे बालक के संग बालवत्, वयस्क और वृद्ध के संग वयस्क और वृद्ध की भाँति और अज्ञानियों से ज्ञान-शून्य की भाँति आचरण करने, बोलने और व्यवहार करने की अपेक्षा की जाती है। किसी विशेष स्वार्थ, उद्देश्य, प्रयत्न अथवा इच्छा से अननुप्रेरित इस नैसर्गिक आत्माभिव्यंजना के मूल में निहित विचार अपनी वास्तविक प्रकृति से उस प्रभु-इच्छा का अत्यन्त निकट से अनुसरण करना है जो प्रत्येक प्राणी में अन्तर्भूत और क्रियाशील है तथा जिसमें न किसी के प्रति पक्षपात है, न पूर्वाग्रह, न अभिरुचि और न दुर्भावना। श्री स्वामी शिवानन्द जी ने भी अपने व्यक्तिगत जीवन, अपनी रचनाओं एवं प्रवचनों में अत्यन्त सहजतापूर्वक अपने आसपास के परिवेश एवं वातावरण को प्रतिबिम्बित किया। उनकी रचनाएँ बुद्धि और विवेक के निर्देशक सिद्धान्तों का निरूपण करने वाली उतनी नहीं हैं, जितनी कि वे आध्यात्मिक जीवन की विधियों के लिए व्यावहारिक निर्देश हैं। वे जिज्ञासुओं को सीधे प्रभावित करती हैं, भले ही उन्होंने उन दशाओं और आन्तरिक परिस्थितियों के सम्बन्ध में पहले कभी ध्यानपूर्वक न सोचा हो जिनके द्वारा प्रेरित हो कर वे प्रकृति में छिपे परन्तु प्रकृति से उच्च तत्त्व के अन्वेषण के लिए आन्तरिक पुकार द्वारा आध्यात्मिक जीवन-यापन करने को प्रस्तुत हुए। उनकी रचनाओं में न वाग्जाल है, न पर्यायोक्ति, न सतही कथन अथवा अनावश्यक स्पष्टीकरण; प्रत्युत् जिज्ञासुओं को सूचनाएँ मात्र देने की अपेक्षा, साधना में प्रत्येक पग पर प्रबुद्ध और निर्देशित करने के लिए उनकी रचनाएँ सभी प्रकार की रहस्यमयता और अस्पष्टता से रहित एक सुस्पष्ट और सुनिश्चित पथ है। उनकी शैली और अभिव्यंजना में असाधारण सरलता है, जो एक ऐसे हृदय की भावना से उमड़ी है, जिसने न केवल पूर्णत्व की झलक देखी है और ब्रह्मानुभूति की है प्रत्युत् जो मानवीय कष्टों और उसके अप्रतिहत अज्ञान की गहराई को देखने की अन्तर्दृष्टि रखता है तथा मानव-जगत् को (जो बाह्यत: समाज, राष्ट्र और विश्व में विस्तारित है) सामान्य सन्तुलित रूप में नैतिक तथा आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने हेतु भी प्रबोधन देने की आवश्यकता अनुभव करता है। उनके उपदेशों का सम्पूर्ण संग्रह प्रबल आध्यात्मिकता के इस स्वर से सशक्त रूप में अनुप्राणित है कि समाज में व्यक्तिगत और सामूहिक जीवन के सभी प्रकारों को अन्तत: एक ऐसे निर्मुक्त अस्तित्व के अभिज्ञान पर आधारित होना है तथा उससे अर्थ और प्रेरणा ग्रहण करनी है, जो प्रकृति के दृश्यमान और विचारणीय विधान से कहीं गहरा है। विश्व को पीड़ा और अज्ञान से मुक्त करने की गहरी व्यग्रता से उत्तेजित स्वामी शिवानन्द जी यथाशक्ति इस स्थिति का यथोचित रूप में सामना करने को कटिबद्ध हो गये और अपनी समस्त शक्ति को स्वयं अपने लिए निर्धारित इस उदात्त, उत्कृष्ट उद्देश्य में लगाने में कोई कसर नहीं छोड़ी। उनके ग्रन्थ साहित्य, अध्यात्म, आचार-नीति, धर्म, रहस्यवाद, मनोविज्ञान, नीतिकथाएँ, कहानियाँ, धार्मिक प्रश्नोत्तर,

योग, प्रार्थना एवं धार्मिक कृत्य आदि मानव से सम्पर्क स्थापित करने के प्राय: सभी साधनों के निदर्शी हैं।

स्वामी शिवानन्द जी के आध्यात्मिक ग्रन्थों को समझने के लिए ऐसा विद्यार्थी होना चाहिए जो न आध्यात्मिक मूल्यों से नितान्त अपरिचित हो और न आध्यात्मिक जीवन के शिखर पर पहुँच चुका हो। यम-नियम तथा साधन-चतुष्टय, आचार और नीतिपरक योग्यताओं से सम्पन्न जो साधक मानसिक शुद्धता के कारण उच्चतर जीवन के अस्तित्व के सम्बन्ध में चेतावनी पा कर, उसे इसी जीवन में पूर्णत: समझने और प्राप्त करने के उत्साह से भर उठता है; परन्तु अपनी अक्षमताओं तथा सन्देह के कारण तथा स्वयं को आगे बढ़ाने की आध्यात्मिक प्रणाली के ज्ञान के अभाव में अशान्त रहता है—उसे स्वामी शिवानन्द जी के ग्रन्थों की ओर उन्मुख होना चाहिए। उनके अधिकांश ग्रन्थ विश्व में दु:ख की स्थिति और उसके स्वरूप के स्पष्ट सजीव अंकन से आरम्भ होते हैं। इस दु:ख के कारण की खोज आध्यात्मिक जीवन-यापन की प्रथम पूर्वापेक्षा तथा मूलभूत अवस्था है। शंकराचार्य के समान श्री स्वामी शिवानन्द जी अत्यन्त निर्भीकतापूर्वक निराकार ब्रह्म की अद्वितीय सत्ता को स्वीकारते हैं और बुद्ध की भाँति जीवन में दु:ख के लक्षणों का भी सजीव चित्र प्रस्तुत करते हैं और इस (दु:ख) के कारणों का अति-सतर्कतापूर्वक निदान करते हैं। इस प्रकार वह मानव की मानसिक दशाओं का विस्तृत विश्लेषण तथा मानव की शान्ति और उसके चरम पूर्णत्व के मार्ग की रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं तथा मानव की अन्तिम नियति की विशेषताओं का गौरवपूर्ण वर्णन करते हैं।

दार्शनिक जीवन

स्वामी शिवानन्द जी के अनुसार जीवन, दर्शन का विकास है और दर्शन है अस्तित्व के रहस्य का उद्‌घाटन, अनुभूति के गहनतर निहितार्थों पर सर्वतोमुखी चिन्तन-मनन। यह मात्र तार्किक भवनों का निर्माण नहीं है। दर्शन अमूर्त कल्पनाकाश में विचरण करने की अपेक्षा जीवन की अतल गहराइयों की खोज है। स्वामी शिवानन्द जी स्वीकार करते हैं कि कोई भी दर्शन, यदि मनुष्य से असम्बद्ध है तो निश्चित रूप से उसका अन्त असफलता में होगा और वह मानव की अधीर और जिज्ञासु प्रवृत्ति को कभी भी आकर्षित नहीं कर सकेगा। स्वामी शिवानन्द जी दर्शन, धर्म और जीवन को एक-समान मानते हैं, जो किसी जगतेतर अथवा भिन्न जगतीय संकल्पनाओं का संकेत नहीं करते प्रत्युत् मानव की क्षुधा और प्यास, यश और प्रभुत्व, जीवन-मूल्य, पर-चिन्ता तथा प्रत्येक के प्रति सम्मान और अन्तत: परम ब्रह्म में लीन हो जाने की एकमात्र आकांक्षा से संयुक्त हो कर चलते हैं। स्वामी शिवानन्द जी के जीवन और उपदेशों में उपयुक्त विवेक पर आधारित ऐसे दिव्य प्रेम के स्वर झंकृत होते हैं जिसमें मानव-मानव के बीच का व्यवधान टूट जाता है और जिसके द्वारा व्यक्ति सरलता से संसार में दूसरों के जीवन में भाग लेने का एक सुखद मार्ग खोज लेता है।

मानवीय प्रयत्नों में प्रतीत होने वाली एकमात्र नींव, अनन्त आशाएँ प्रभु के सार्वभौम नियम और व्यक्तिगत इच्छा के संयोग के निकटस्थ तथ्य की ओर नहीं तो कम-से-कम उसकी सुदूर सम्भावना की ओर तो संकेत करती ही हैं। प्रेम और आशा-आकांक्षा का यह आशय ही सार्वभौम सहानुभूति तथा परोपकारिता की

नि:स्वार्थ भावना पर आधारित विश्व-बन्धुत्व, विश्व-शासन का आश्वासन दे सकता है। लोकोपकार का यह सिद्धान्त, वैयक्तिक मानव के चरम कल्याण से सम्बद्धता तथा मानवता को परब्रह्म, सर्वशक्तिमान् के अस्तित्व के प्रति जाग्रत करने की आवश्यकता पर प्रखर प्रत्यक्ष बोध—ये ही स्वामी जी के जीवन और उपदेशों की विशेषताएँ हैं।

कहा जाता है कि वेद अपरिमित है। इस उक्ति का अर्थ है कि ज्ञान असीम है तथा सृष्टि के आश्चर्य अभेद्य हैं। शास्त्र कहते हैं कि प्रभु-महिमा की कोई सीमा नहीं तथा प्रभु की प्रकृति को तथा प्रभु-प्राप्ति के पथ को समझने का प्रयत्न भी अनन्त है। स्वामी शिवानन्द जी ने इस महान् सत्य के महत्त्व को समझा है; अत: उन्होंने यह कभी भी अनुभव नहीं किया कि आध्यात्मिक शिक्षाओं का अन्त हो सकता है या कोई आध्यात्मिक मार्ग की शिक्षा देने अथवा आध्यात्मिक निर्देशों के श्रवण से थक सकता है या कि जिस सावधानी, सतर्कता से प्रत्येक स्तर पर गुरु अपने शिष्य की देख-भाल करता है—उसकी कोई सीमा हो सकती है। समग्र जीवन आध्यात्मिक आशय से परिपूर्ण है, अत: प्रत्येक क्षण साधना का सुयोग है तथा आध्यात्मिक साधना के सम्बन्ध में प्रलोभनों, असफलताओं, मन के पथ-भ्रष्ट हो जाने एवं उसकी अवरुद्धता के प्रति अपार सावधानी रखने का अवसर है। दार्शनिक जीवन व्यावहारिक आचरण का कोई अद्‌भुत ढंग नहीं है, प्रत्युत् सही ज्ञान की स्वस्थ परिपक्वता तथा सत्य में गहन अन्तर्दृष्टि के साथ उत्तम रूप में समञ्जित, सही क्रियाओं का एक सामान्य प्रवाह है।

विश्व-शान्ति का रहस्य

स्वामी शिवानन्द जी के प्रेरणादायक उपदेश मुक्ति—मानव, समाज, राष्ट्र और विश्व की भौतिक, बौद्धिक, नैतिक और आध्यात्मिक मुक्ति—के गीत हैं। सर्वतोमुखी मुक्ति के इस अमर गीत का मूल स्थायी स्वर शान्ति है—एकात्म-तत्त्व का पाठ सीखने और उसे आत्मसात कर लेने पर, सबके लिए, सर्वत्र शान्ति—"**सर्वेषां शान्तिर्भवतु।**" मानव का प्रत्येक उच्छ्वास, उसके अंगों की प्रत्येक गति, उसके व्यवहार की प्रत्येक भंगिमा मुक्ति और शान्ति से युक्त जीवन की सरल और सुखदतर परिस्थितियाँ प्रस्तुत करने हेतु, व्यक्तित्व के पुन:निर्माण का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष प्रयत्न है। इस विशाल ब्रह्माण्ड में बृहद् स्तर पर जो घटित हो रहा है, मानव उसी के अण्वीक्षीय आदर्श (नमूने) को प्रस्तुत करता है। महत्त्वाकांक्षाएँ, चेतना के स्वरूप में परिवर्तन तथा मानव में तीव्र रूप में क्रियाशील एकात्मता, मुक्ति और आनन्द तक पहुँचने का प्रयत्न, व्यस्त रूप में ब्रह्माण्डीय प्रयोजन की पूर्ति में लगे हुए भी देखे जा सकते हैं।

मनुष्य व्यक्तिगत जीवन में, समाज में और राज्य में अव्यवस्था और उलझन दूर करके एक नियमित व्यवस्था और परम्परा को स्थापित करने के लिए संघर्ष करता है, इस स्थापना की एक तीव्र भावना भी प्राय: प्रत्येक प्राणी (विशेषकर उन आत्मचेतन व्यक्तियों में जिनमें बुद्धि का विकास उचित-अनुचित और सत्य-असत्य का अन्तर पहचानने की क्षमता को व्यक्त करने के स्तर तक पहुँच चुका है) की प्रकृति में निहित है। विश्व इसी को कुछ भिन्न प्रकार से करता है। मानव अपने

अपर्याप्त ज्ञान के आधार पर प्रयत्नशील रहता है जब कि विश्व चरम सत्य, शिव और मुक्ति को अपने भीतर ही प्राप्त करने की प्रवृत्ति को अबाध-रूप में अभिव्यंजित करता हुआ मुक्त रूप में क्रियाशील है।

अवयवों में घटित होने वाला परिवर्तन समूची संरचना को भी प्रभावित करता है। जिस प्रकार मानव-शरीर की प्रत्येक कोशिका समूचे शरीर को संचालित करने वाले नियम के अनुरूप स्वयं को व्यवस्थित करती है और इस सम्बन्धी कोशिका की प्रत्येक त्रुटि उस त्रुटि के संशोधनार्थ शरीर में एक प्रतिक्रिया उत्पन्न कर देती है; इसी प्रकार ब्रह्माण्डीय नियम ब्रह्माण्ड को संघटित करने वाले व्यक्तियों द्वारा की गयी त्रुटियों को ठीक करते हैं। छोटी त्रुटियाँ हल्की प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न करती हैं और बड़ी भूलें भयानक उथल-पुथल मचा देती हैं। यहाँ तक कि स्थूलतर जगत् के तथाकथित अनदेखे कार्य सूक्ष्मतर क्षेत्रों में सशक्त स्पन्दन उत्पन्न कर देते हैं।

स्वामी शिवानन्द जी के समस्त उपदेश और कार्य इस धर्म के, इस सनातन नियम के अस्तित्व के प्रत्येक स्तर पर, समाज की प्रत्येक श्रेणी के व्यक्ति, पुरुष, स्त्री, बालक में दृष्टिगोचर एकत्व के नियम के ज्ञान तथा व्यवहार-पक्ष पर आधारित व्यक्तिगत और विश्व-शान्ति की सम्भावना पर अथक बल देने पर केन्द्रित हैं। मानवता के प्रति यह उनका आह्वान एक अनवरत चेतावनी है कि शान्ति कभी भी युद्ध, शोषण, अधिकार-प्रदर्शन तथा प्रतिस्पर्धा द्वारा नहीं मिल सकती। सतह पर ये विस्फोटक तरंगें इच्छा और लोभ के झंझावात से उमड़ी हैं; अत: मानव को तब तक विश्राम नहीं मिल सकता जब तक विवेक एवं सहयोग द्वारा ये प्रबल संक्षोभ रुक नहीं जाते। सुख के सम्बन्ध में मानव की संकल्पना और कुछ नहीं, प्रत्युत् वर्तमान अच्छाई के सम्बन्ध में भ्रान्त धारणा का परिणाम है। उसकी इच्छा भावी भलाई के प्रति गलत विचार का परिणाम है। उसकी वेदना वर्तमान अनिष्ट के प्रति मिथ्या विचार का प्रतिफल है तथा उसका भय भावी अनिष्ट की प्रकृति के भ्रान्तिपूर्ण मूल्यांकन का उप-परिणाम है।

समस्त मनोविकार तथा उनके अनेकानेक स्वरूप भ्रान्त विचारणा द्वारा प्रस्तुत वास्तविक रोग हैं। इनका उन्मूलन करना है, क्योंकि ये अविवेकजनित एवं अज्ञानाधारित हैं। सत्य और शिव की दिशा में मानव की क्षमताओं को उचित शिक्षा की आवश्यकता है। मानव में अन्तर्निहित शान्ति तथा प्रभु के नियम को (जो प्रत्येक वस्तु का पोषक है) दैनिक जीवन में प्रव्यक्त करने के लिए तथा स्वयं स्वर्ग को इसी पृथ्वी पर अवतरित कराने के लिए, समाज के प्रत्येक वर्ग (वर्ण) और जीवन के प्रत्येक स्तर (आश्रम) में उनके अपने धर्मानुसार अटूट क्रमशीलता को होना अनिवार्य है। स्वामी शिवानन्द जी के अनुसार यदि अध्ययन, चिन्तन और सेवा द्वारा वांछित ज्ञान प्राप्त कर लिया जाये तो हर प्रकार का जीवन प्रभुयोग (दिव्य योग) में परिणत हो सकता है।

पूज्य गान्धी जी ने राजनीति के क्षेत्र में ही नहीं, अपितु 'सत्य भगवान् है'—इस पक्ष पर बल दे कर धर्म, दर्शन और आचार-नीति के क्षेत्र में भी अन्यतम सेवा की है। 'भगवान् सत्य है'—इस दृढ़ कथन में निहित निर्णय के प्रश्नवाचक बनने की सम्भावना प्राय: रहती है; क्योंकि विधेय 'सत्य' उस भगवान् से सम्बन्ध बताता है जिसका अस्तित्व यहाँ पूर्व-कल्पित अथवा पहले से ही मान लिया

गया है। ऐसे व्यक्ति जिनके लिए भगवान् का अस्तित्व आस्था की वस्तु नहीं और जिनकी विवेकपरक अभिवृत्ति उसके प्रति विश्वस्त नहीं, वे स्वभावत: 'भगवान् सत्य है'—इस दृढ़ कथन को प्रमाणित तथ्य की भाँति न ले कर औपकाल्पनिक प्रस्थापना के रूप में लेते हैं, परन्तु 'सत्य भगवान् है' इस कथन में कोई विशिष्ट असंगति निहित नहीं है; क्योंकि सत्य के अस्तित्व को कोई अस्वीकार नहीं कर सकता और सत्य उसमें एकाकार है जिसे हम भगवान् के नाम से जानते हैं। सत्य विश्व का नियम है। यह नियम अन्धा नहीं है; प्रत्युत् बुद्धि अथवा ज्ञान ही है, जो स्वयं हर जगह सक्रिय है। यहाँ नियम और नियन्ता एक है, अत: स्वामी शिवानन्द जी के लिए सत्य का अर्थ सत्य बोलना ही नहीं, अपितु वह है, जो है—अर्थात् '**तत्सत्**'। यह अपरिवर्तनशील, असीम और सनातन सारतत्त्व है जो मानव, समाज, राष्ट्र और विश्व को शासित एवं निर्देशित करने वाला नियम और प्रेम एक संग दोनों है। सामान्य मानव के जीवन में इस सत्य और प्रेम का वास्तविक महत्त्व उचित रूप में आत्मसात् नहीं हो पाता; परन्तु एक अतिमानव के जीवन में, जो विश्वशासक ही नहीं, स्वशासक भी है, यह पूर्णरूपेण उपलब्ध है। यह नीत्शे द्वारा प्रतिपादित शक्ति के प्रति मानव का अहंवादी उन्नयन नहीं है, बल्कि आत्म-साक्षात्कार प्राप्त सन्त, दिव्यता का साक्षात् स्वरूप है जो अतिमानव का आदर्श होता है तथा सांसारिक प्राणी होते हुए भी परब्रह्म का प्रतिनिधि होता है। वास्तविक ज्ञान वस्तुओं का तात्त्विक ज्ञान, विश्व-सापेक्ष ज्ञान तथा सत्य-सापेक्ष ज्ञान है। यह सत्य, यह नियम जब सँभाला और सुरक्षित रखा जाता है, तब यह प्रत्येक को सँभालता और सुरक्षित करता है—"**धर्मो रक्षति रक्षित:।**" जब हम यह अनुभव करते हैं कि वास्तविक आनन्द प्रभु के नियमों के पालन में है, तभी हम वस्तुत: स्वतन्त्र और सभी बन्धनों से मुक्त होते हैं। धर्म मानव और विश्व का अन्तरतम स्वभाव और सत्य है; क्योंकि यह दैवी इच्छा का आकार है। यही वास्तविक कर्तव्य है और विश्व-शान्ति का रहस्य इसी में है। स्वामी शिवानन्द जी विश्व की एकता हेतु तथा मानव द्वारा अनुकरण किये जाने के लिए इस सनातन सत्य और प्रकृति के इस नियम और व्यवस्था को जी रहे थे तथा इसका उपदेश देते थे। यदि इस ज्ञान का किंचित् कण मानव की अनित्य प्रकृति के अँधेरे कोनों में प्रकाश कर सके, तो उनका दिव्य कर्तव्य पूर्ण हो जायेगा।

एकत्व-भावना ही शान्ति-निकेतन

समस्त विश्व में एकता स्थापित करने वाला नियम और प्रेम का सारतत्त्व यही है। यही विश्व-शान्ति का मूल-मन्त्र और वैश्विक प्रेम एवं भ्रातृभावना के सिद्धान्त का प्रमुख आधार है। भारत के पुरातन ज्ञान को—उस ज्ञान को जिसने मानव और उसके परिवेश की सापेक्षता की खोज की—दूर-दूर प्रसारित करते हुए स्वामी शिवानन्द जी मानवता से विश्व में सच्ची शान्ति लाने के लिए शक्ति-सम्पन्न होने का निरन्तर आग्रह करते हैं। उनके समस्त उपदेश और सन्देश परम तत्त्व की चेतना में व्यक्तित्व के विलयन द्वारा प्राप्त एकत्व की उपलब्धि के पाठ हैं। जीवन का लक्ष्य उस शाश्वत तत्त्व की व्यावहारिक सिद्धि करना है जो मानव में अतिसीमित और निगूढ़ रूप में विद्यमान है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छाओं, आकांक्षाओं और लालसाओं के रूप में स्वयं को अपनी सीमा से बाहर तक विस्तार देता है। इच्छा किसी प्रकार की भी हो, चेतना के स्तरों पर वह किसी कमी, अभाव

अथवा अपर्याप्तता की सूचक है। मानव को सम्पूर्ण विश्व दे दीजिए, वह सन्तुष्ट नहीं होगा। क्यों? क्योंकि कुछ ऐसा भी है जो जगतेतर है, सांसारिक व्यक्ति की पहुँच के बाहर है। उसे सम्पूर्ण स्वर्ग दे दीजिए, वह तब भी अपरितुष्ट रहेगा; क्योंकि उसकी आवश्यकता तब भी अपूर्ण रहेगी। यह महा-दुर्भाग्य सृष्टि के संग निज की एकात्मता को न जानने का प्रत्यक्ष परिणाम है। शास्त्र कहते हैं : ''विशाल हृदय वाले व्यक्ति के लिए यह समग्र विश्व एक परिवार है—**उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।**'' मानव को तब तक शान्ति नहीं मिल सकेगी, जब तक वह अपने विस्तृत परिवेश को अपनी ही आत्मा के रूप में पहचानना, उसमें जीना तथा उसकी सेवा करना आरम्भ नहीं कर देता तथा जब तक वह इस भव्य आदर्श के अनुरूप दैनिक जीवन में अपने आचरण को बना पाने का भरसक प्रयत्न नहीं करता। शान्ति केवल प्रभु में है। जो शान्ति हम इस संसार में प्राप्त कर सकने की आशा करते हैं, वह उस सीमा पर निर्भर है जिस सीमा तक हम अपने सामाजिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में आत्मा की इस अनन्तता को समझने और व्यक्त करने में समर्थ हैं। यह उपलब्धि सत्य के सम्बन्ध में मानव के ज्ञान और अनुभव का परिणाम मात्र नहीं, प्रत्युत् पूर्णत्व-प्राप्ति के लिए किये गये उसके अनवरत प्रयासों की सफलता के लिए एक आवश्यक स्थिति भी है। स्वामी शिवानन्द जी का यह उपदेश, धर्म, नीति, दर्शन तथा आर्ष वाक्य समाज के प्रत्येक स्तर के व्यक्तियों के लिए हैं। यही मानवता की आशा है।

स्वामी शिवानन्द जी ने इसी ध्येय की पूर्ति के लिए विश्व के दार्शनिकों से एक उच्च बुद्धिसम्पन्न आध्यात्मिक शक्तियों के परिसंघ के रूप में सहयोगपूर्वक कार्य करने का आग्रह किया था। उनका सन्देश है—''यदि समय रहते ही विश्व की एक महान् विपत्ति को दूर करना है तो विश्व के प्रमुख दार्शनिक आगे आयें। उनका यह पुनीत कर्तव्य है। दिव्य प्रज्ञा की ज्योति तथा सार्वभौम शक्ति का प्रकाश—जो समस्त जीवों को एकता में बाँधे रखता है तथा सम्पूर्ण विश्व का आधार एवं पोषक है—उन्हीं के माध्यम से प्रकट होता है।'' ''यह पर्याप्त नहीं है कि आज भगवान् का सन्देश युद्ध-क्षेत्र में अथवा किसी तीर्थ-स्थल पर दिया जाये और उसके प्रचारित-प्रसारित होने के लिए समयावधि की अपेक्षा की जाये। अखिल विश्व में सभी एक-साथ इन दैवी शब्दों को सुनें और सन्मार्गी हों। यह विश्व के दार्शनिकों की संयुक्त समिति के माध्यम से ही सम्भव हो सकता है; अत: दैवी-मध्यस्थता वह रूप ले सकती है।'' ''किसी प्रकार भी धर्मों के मूल-भाव में परिवर्तन किये बिना वे सभी धर्मों का एक संश्लिष्ट रूप प्रस्तुत करने में समर्थ हो सकेंगे जिससे प्रत्येक धर्म अन्य धर्मों की विशिष्टता को ग्रहण कर सकेगा और इस प्रकार विश्व-धर्म के माध्यम से एक विश्व-व्यवस्था का उदय होगा।'' ''यह विश्व दार्शनिकों की संयुक्त समिति, वैज्ञानिकों, अर्थशास्त्रियों और राजनीतिज्ञों को (वैचारिक) भवन के निर्माण हेतु सही आधार प्रदान करेगी। इस प्रकार दार्शनिकों द्वारा निर्देशित होकर, वैज्ञानिक मानवता के सुख और कल्याण के लिए कार्य करेंगे, अर्थशास्त्री राष्ट्र-मण्डल के लिए योजनाएँ बनायेंगे, राजनीतिज्ञ शान्तिपूर्वक जीवन-यापन के उपाय और साधनों की खोज करेंगे तथा विश्व में शान्ति स्थापित करेंगे।''

(अनुवादिका : सुश्री प्रकाश अग्रवाल)

तिरेसठ नयनार सन्त :

दण्डी अडिगल नयनार

परम पावन श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

तिरुवारूर में, चोला राज्य में, दण्डी अडिगल नाम के एक पुण्यात्मा भक्त रहते थे। वे जन्मान्ध थे। किन्तु वे सदैव पञ्चाक्षरी मन्त्र का जप करते रहते थे तथा उन्हें मन की आँखों से सदा भगवान् के दर्शन होते थे। वे नित्य मन्दिर जाते, परिक्रमा करते और भगवान् की पूजा किया करते थे। मन्दिर के पश्चिम की ओर एक सरोवर था जिसके चारों ओर जैन लोग रहते थे। दण्डी अडिगल में उस सरोवर के क्षेत्र को बढ़ाने की इच्छा हुई। किन्तु जन्म से दृष्टिहीन एक मनुष्य से यह कैसे हो सकता था? तथापि दृढ़निश्चय और भगवान् में पूर्ण श्रद्धा के साथ, उन्होंने ऐसा करने का निश्चय कर लिया। उन्होंने तालाब के भीतर जहाँ खुदाई करनी थी वहाँ एक डण्डा लगा दिया और उसके साथ रस्सी बाँध दी। रस्सी को दूसरी ओर से तालाब के बाहर जहाँ तक खुदाई करनी थी वहाँ एक अन्य डण्डा लगा कर उसके साथ बाँध दिया। अब वे उस रस्सी को पकड़ कर उसकी सहायता से तालाब के भीतर उतर कर कुदाल से खुदाई करते, साथ में उठायी हुई टोकरी में मिट्टी एकत्रित करते और फिर पुनः रस्सी के साथ-साथ तट पर आ कर मिट्टी को बाहर गिरा देते थे।

जैन लोग दृष्टिहीन मनुष्य के इस चमत्कारी कार्य को देख रहे थे और इस कार्य में मिलती हुई सफलता से उन सबको ईर्ष्या भी हो रही थी। अतः उन्होंने इनके विश्वास को डिगाना चाहा। उन्होंने एक छलपूर्ण तर्क करते हुए कहा, ''तुम नेत्रहीन हो और तुम्हें दिखायी नहीं देता कि खुदाई करते समय तुम्हारी कुदाल से कितने जीवों की हत्या हो रही है और यह बहुत बड़ा पाप है। इसलिए, इस मूर्खतापूर्ण कार्य को बन्द करो।'' नयनार ने उन्हें इस महान् कार्य की पावनता के सम्बन्ध में वर्णन करते हुए बताया कि भगवान् को यह कार्य अति प्रिय है और यह भी कहा कि उन्हें पूर्ण विश्वास है कि भगवान् की कृपा से एक भी जीव को क्षति नहीं पहुँचेगी। वे अपने कार्य में संलग्न रहे। अब जैन लोगों ने उनका अपमान करना आरम्भ कर दिया। वे कहने लगे, ''तुम जन्मान्ध तो थे ही, अब बहरे भी हो गये हो। यद्यपि हम तुम्हें सही परामर्श दे रहे हैं, तथापि तुम सुन नहीं रहे हो।'' नयनार ने उत्तर दिया, ''हे अज्ञानीजनो, आप सब भगवान् की महिमा को नहीं जानते? भगवान् मेरा एकमात्र आधार हैं, मैं केवल उनकी सेवा करने के लिए जीवित हूँ। उनकी कृपा का उपहास न करें। उनकी कृपा से, यदि मुझे दिखायी देने लग गया और आप नेत्रहीन हो गये, तब आप क्या करेंगे?'' इस उत्तर से वे अत्यधिक कुपित हो गये, उन्होंने नयनार के हाथों से कुदाल और टोकरी छीन ली।

भग्नहृदय के साथ दण्डी अडिगल मन्दिर गये और भगवान् के समक्ष अपनी व्यथा प्रकट की। भगवान् ने उसी रात्रि में उनको स्वप्न में दर्शन दिये और उनकी सहायता करने का विश्वास दिलाया। भगवान् ने राजा को भी स्वप्न में दर्शन दिये और नयनार के कष्ट का निवारण करने के लिए कहा। सम्राट् ने जैन लोगों को बुलाया। दण्डी अडिगल भी वहीं थे। सम्राट् ने दण्डी को सम्बोधित किया, ''ओ भक्त, तुमने यदि यह कहा था कि भगवान् की कृपा से तुम्हें दृष्टि प्राप्त हो सकती है और जैन लोग अपनी दृष्टि गँवा सकते हैं, तो यह सिद्ध करो।'' दण्डी अडिगल ने कहा, ''भगवान् शिव ही वस्तुतः भगवान् हैं। वह मेरे एकमात्र आधार और रक्षक हैं। मैं केवल उनका सेवक हूँ। यदि यह सत्य है, तो मुझे दृष्टि प्राप्त हो और जैन लोग अपनी दृष्टि गँवा दें।'' फिर उन्होंने पञ्चाक्षरी मन्त्र का उच्चारण किया और सरोवर में उतर गये। जब वे बाहर आये तो उनको दिखायी देने लगा और उसी क्षण जैन लोग नेत्रहीन हो गये। यह देख सभी आश्चर्यचकित रह गये। सम्राट् ने जैन लोगों को राज्य से निष्कासित कर दिया और सब लोगों ने पुनः अपने धर्म को अपना लिया। दण्डी अडिगल को भगवद्-साक्षात्कार प्राप्त हो गया।

(अनुवादिका : स्वामी शिवाश्रितानन्द माता जी)

आपका शान्ति-दूत :

चार घनिष्ठतम मित्र

परम पावन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज

आठ मास तक भारत में रहने के उपरान्त वापस लौट कर आये हुए एक व्यक्ति ने मुझे लिखा, ''ओह, स्वामी जी, हम फिर से इस 'वस्तु-जगत्' में लौट आये हैं।'' उसने इसे कहा, ''वस्तु जगत्'', एक ऐसी धरती जहाँ व्यक्ति से अधिक वस्तु का महत्त्व है। कितना सही है यह! मनुष्य वस्तुओं का दास है, और जब तक वह अपनी भूल को समझता है, समय बीत गया होता है। मनुष्य का सारा-का-सारा समय और ध्यान वस्तुएँ निगल जाती हैं, उसके अपने लिए समय ही नहीं होता। वह वस्तुओं के लिए जीता है, वस्तुओं के लिए काम करता रहता है, अन्ततः उसकी जीवन-लीला समाप्त हो जाती है और वह समस्त वस्तुओं को यहीं छोड़ कर वस्तु-विहीन ही चला जाता है। ऐसा जीवन जीने में बुद्धिमत्ता नहीं है। यह विजयी होने का पथ नहीं है, सुख और शान्ति का पथ नहीं है और यह मुक्ति का मार्ग नहीं है। यह असफलता का मार्ग है, यह हीरक को छोड़ देने और काँच का कचरा एकत्रित कर लेने का पथ है। भले ही आप रंग-बिरंगे काँच के दश सहस्र टुकड़े एकत्रित कर लेते हैं तो भी उसका क्या लाभ, यदि आपने हीरक को ही खो दिया हो?

आप ईश्वर-प्रदत्त विवेक-बुद्धि का उपयोग यह जानने में करें कि इन वस्तु-पदार्थों का वास्तविक गुण क्या है और उनका वास्तव में क्या मूल्य है। ये आपको प्रसन्नता नहीं दे सकते, और ये आपका लक्ष्य भी नहीं हैं। अपने इस शरीर के वास्तविक स्वभाव को भी जानें जिसकी आप दिन-रात दासता में लगे हुए हैं। आप भले ही इसकी कितनी भी देख-रेख करते रहें, एक-न-एक दिन यह आपको कहने वाला है, ''कार्य ठप्प! हड़ताल पर!'' और इससे पहले कि आप कुछ कर सकें, जीवन समाप्त हो चुका होगा। बाद में यह शरीर आपके किसी काम का नहीं। आप यह जानते हैं, फिर भी माया का भ्रम ऐसा है कि आप इस सरल-शुद्ध जीवनशैली के द्वारा अपने इस शरीर को एक स्वस्थ उपकरण बनाये रखने की अपेक्षा इसके अत्यधिक लाड़-प्यार में लगे रहते हैं। हम भ्रम और अन्धकार की उस अवस्था में हैं जहाँ हम शरीर, मन, इन्द्रियों और वस्तु-पदार्थों की अदम्य इच्छाओं के पाश में जकड़े हुए हैं।

विवेकशील बनें, उठें! जागें! अपने जन्म-सिद्ध अधिकार को प्राप्त करने के लिए क्रियाशील हो जायें, आत्म-प्राप्ति के लिए जियें और अपनी बुद्धि का उपयोग वस्तुओं के वास्तविक स्वरूप को जानने में करें। उनके बाह्य रूप और आकर्षणों का शिकार न हो जायें, नहीं तो वे आपको घुमाती रहेंगी! यह इतना हास्यास्पद नहीं है, क्योंकि वे आपको घुमाने ले जायेंगी और फिर कहीं भी ले जा कर पटक देंगी! उनके साथ जाने में इतनी कुछ बुराई नहीं है, किन्तु आपको इस पथ पर निश्चित रूप से विवेकशील, जागरूक, सतर्क और सावधान रहना होगा।

प्रथम मित्र : दार्शनिक अन्वेषण

उचित अन्वेषण के द्वारा अपनी इस बुद्धि का उपयोग करें, ''मैं कौन हूँ? इस संसार के साथ मेरा कैसा सम्बन्ध है? असंख्य नाम-रूपों वाले इस विश्व से भी अधिक और कोई अन्य है? जिस संसार में मैं रहता हूँ, वह संसार और स्वयं मैं भी कहाँ से आये हैं?'' वास्तव में आप इस संसार में आये हुए एक मुसाफिर हैं। आप एक ऐसे दूर से आये हुए यात्री के समान हैं जो एक ऐसे अनजान देश में से गुजरते हुए जा रहा हो जो उसका अपना नहीं है। यहाँ के सब लोग आपके लिए अनजान हैं, और आप भी उनके लिए अनजान ही हैं, क्योंकि अन्ततः कोई भी आपका अपना नहीं है। तो फिर आपका अपना कौन है, और आप किसके हैं? जब आप यहाँ इस संसार में आये थे तो कितनों को अपने साथ ले कर आये थे, और जब आपका अन्तिम समय आयेगा तो जाते समय कितने आपके साथ जायेंगे? क्या यथार्थ यह नहीं है कि इस धरा पर आप एकाकी यात्री हैं? भले ही सारी धरती लोगों से भरी हुई हो, तथापि सत्य तो यही है कि आपकी यात्रा में अन्य कोई भी आपके साथ नहीं है, केवल एकमात्र भगवान् ही आपके साथ हैं।

भगवान् ने आपको स्थायी और अस्थायी के बीच का अन्तर खोजने, जानने और समझने के लिए ही यह बुद्धि प्रदान की है। आपकी इस सर्वोत्तम बुद्धि का यह सर्वोच्च कार्य ही आपको अन्य प्राणियों से भिन्न बनाता है। अन्ततः वह क्या है जो आपको इस धरा के अन्य सभी जीवों से भिन्न बनाता है? वह यह विवेक से पूर्ण बुद्धि ही है। इस धरती के अन्य किसी भी जीव के पास यह विलक्षणता नहीं है जिसके कारण यह कहा गया है कि भगवान् ने मानव की रचना अपने रूप में की है। यदि इस विलक्षण बुद्धि का सदुपयोग स्वयं की, परमात्मा की खोज के कार्य में और सृष्टि की रचना के रहस्य की खोज में नहीं किया, तब फिर आपने इसका उपयोग क्या करने में किया है?

सम्भवतया आपने कतिपय कार्यक्षेत्रों में सफल होने के लिए इसका उपयोग किया होगा, किन्तु अन्ततः इसका लाभ कब तक रहने वाला है? जितने समय तक आप अपने इस शरीर में हैं, तब तक बुद्धि का यह उपयोग इस सांसारिक क्षेत्र में कुछ-न-कुछ तात्कालिक लाभ दे सकता है, किन्तु अन्ततोगत्वा क्या यह आपकी वृद्धावस्था से, रोगों से, विघटन से और मृत्यु से रक्षा करेगा? इतनी दूर तक क्या जाना, यहाँ तक कि जब तक आप जीवित हैं, क्या यह तनाव, चिन्ता, अवसाद, निराशा और भ्रान्ति से आपको सुरक्षित रखेगा? क्या यह प्रेम और घृणा की पारस्परिक क्रिया से आपको उन्मुक्त कर सकता है अथवा आपकी मानसिक समस्याओं को हल कर सकता है? नहीं! धन, सम्पत्ति, सम्पन्नता—इन सबमें आपको जीवन की समस्याओं और कष्टों से मुक्त करवाने की शक्ति नहीं है। और जब तक ये सब-कुछ पूर्णतया दूर नहीं होते, तब तक हम वास्तविक शान्ति एवं सुख नहीं पा सकते।

(क्रमशः)

(अनुवादिका : स्वामी शिवाश्रितानन्द माता जी)

धार्मिक उत्सवों का आध्यात्मिक अभिप्राय :

शिव – रहस्यपूर्ण रात्रि

परम पावन श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज

(पूर्व-अंक से आगे)

स्वप्न में हम पर्वत, नदियों, व्यक्तियों इत्यादि पदार्थों को देखते हैं, परन्तु वे वहाँ नहीं होते। जो वस्तुएँ वहाँ नहीं हैं, वे स्वप्न में दिखायी देती हैं। अब, जो पर्वत आपने स्वप्न में देखा, क्या वह वास्तव में था? नहीं। परन्तु क्या आपने देखा नहीं? हाँ, आपने देखा। जब वह वहाँ नहीं था, तब आपने कैसे देखा? जो पदार्थ नहीं है, क्या उसे देखना सम्भव है? जो वस्तुएँ नहीं हैं, उन्हें कैसे देखा जा सकता है? यह कहना असंगत होगा कि जिन पदार्थों की सत्ता नहीं है, उन्हें देखा जा सकता है। जब पदार्थ नहीं हैं, तो आप क्या देखते हैं? आपको आश्चर्य होगा! वास्तव में स्वप्न में मन का दृश्य पदार्थों में विघटन हो जाता है, तथा मन स्वयं वहाँ पर्वत-रूप हो जाता है। मन के एक भाग का पदार्थ में तथा एक भाग देखते हुए कर्ता के रूप में होने के कारण तनाव हो जाता है। इसीलिए हम स्वप्न में विचलित हो जाते हैं। हम प्रसन्न नहीं रह सकते। वह न तो जाग्रतावस्था है, न ही निद्रावस्था। इस अवस्था में प्रसन्न रहना अत्यन्त कठिन है, क्योंकि चेतना की तनावपूर्ण अवस्था उत्पन्न हो जाती है। जो हमारे साथ स्वप्न में होता है, वही हमारे साथ जाग्रतावस्था में भी होता है। जिस प्रकार स्वप्न में मन दो भागों में विभक्त हो गया था, दृष्टा तथा दृश्य, जो देखा जा रहा था, जाग्रतावस्था में भी यह स्वयं को कर्ता तथा विषय में विभक्त कर देता है। यह विभक्त व्यक्तित्व है। यह ऐसा है, मानो, आपका अपना व्यक्तित्व दो भागों में विभक्त कर दिया गया हो, जिसका आधा भाग 'दृष्टा' है तथा दूसरा आधा भाग 'दृश्य' है। यह ऐसा है जैसे आपके व्यक्तित्व का एक भाग आपके व्यक्तित्व के दूसरे भाग को देख रहा हो। आप स्वयं को ही देख रहे हैं, मानो आप कोई अन्य व्यक्ति हों। आप अपने-आपको विषयाश्रित कर देते हैं, आप स्वयं को विघटित कर देते हैं। इस स्थिति से अधिक त्रुटिपूर्ण तथा अवांछनीय क्या हो सकता है? यह मानसिक रुग्णता है।

जाग्रत तथा स्वप्न में तुलना करने के उपरान्त अब हम स्वप्नावस्था को समझ पा रहे हैं। जब आप जागते हैं, तब आप स्वप्न-पदार्थ नहीं देखते तथा तब आप स्वप्नावस्था का विश्लेषण करने लगते हैं। हम कहते हैं—जब हम जाग्रत अवस्था में होते हैं, हम वास्तविकता के संसार में होते हैं, जब कि स्वप्न में हम मिथ्या-संसार में होते हैं। आपको कैसे ज्ञात कि स्वप्न का संसार मिथ्या था? मात्र इसीलिए कि हम उसकी तुलना जाग्रत स्थिति से करते हैं जिसे हम वास्तविक मानते हैं। आपको कैसे पता कि जाग्रत स्थिति वास्तविक है? आप इस विषय में कुछ नहीं कह सकते; क्योंकि आप इसकी तुलना किसी से नहीं कर सकते, जैसा आपने स्वप्न में किया था। यदि आप कोई अन्य सन्दर्भ-मानक जान सकते हैं जो जाग्रतावस्था से भी उच्च हो, तो आप उसका निर्णय कर सकते थे, चाहे वह वास्तविक हो अथवा मिथ्या, अच्छा या बुरा इत्यादि। जब आप स्वप्न देखते हैं, आप यह नहीं जानते कि पदार्थ मिथ्या हैं। आप उन्हें

वास्तविक मानते हैं तथा बिना प्रमाण के उन्हें सही मानते हैं। स्वप्न तथा जाग्रत संसार की तुलना स्वप्न-जगत् के मिथ्या होने के हमारे निर्णय हेतु उत्तरदायी है। परन्तु आप जाग्रत संसार की तुलना किससे करेंगे? इस समय इसकी तुलना हेतु कुछ नहीं है, तथा इसीलिए हम ऐसी स्थिति में हैं जो आत्मोचित, आत्म-सन्तुष्ट तथा संशोधन के लिए असमर्थ है।

जब आप यह सोचते हैं कि आप बिलकुल सही हैं, तो आपको कोई नहीं सिखा सकता। आपको कोई नहीं सही कर सकता, क्योंकि आप सोचते हैं कि आप सही हैं। सिखाने का प्रश्न तभी उठता है जब आपको यह अनुभव हो कि आप अज्ञानी हैं तथा आपको पढ़ाने की आवश्यकता है। जाग्रत संसार मात्र हमें यह बताने के लिए है कि क्या हो सकता था अथवा क्या हो रहा है। जब तक हम इस अवस्था को पार नहीं कर लेते, तब तक हमें यह ज्ञात नहीं हो सकता कि वास्तव में क्या हो रहा है, जिसे हमने अभी तक पार नहीं किया है। परन्तु स्वप्नावस्था का विश्लेषण करने के पश्चात् हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि कुछ सीमा तक जाग्रत अवस्था में भी हम मूर्खों के संसार में हैं। इस बात की क्या गारण्टी है कि हम इस जाग्रत संसार से किसी अन्य अवस्था में दोबारा नहीं जागेंगे? जिस प्रकार स्वप्न में आपको यह ज्ञात नहीं था कि आप स्वप्न देख रहे थे, इस जाग्रत अवस्था में भी आप यह नहीं जान सकते कि आप स्वप्न-तुल्य अवस्था में हैं। आप सोचते हैं कि जाग्रतावस्था में यह संसार सत्य तथा ठोस वास्तविकता है। इन्द्रियों के लिए न दिखायी देना अन्धकार के समतुल्य है, वह अन्धकार जिसका अनुभव हमें गहन निद्रा में होता है।

(क्रमशः)

(अनुवादिका : मेधा सचदेव)

''सदा सत्य बोलिए, स्पष्ट बोलिए''—यह उपदेश है। जब आपसे पूछा जाये, आप सत्य ही बोलिए। इसका अर्थ यह नहीं है कि आप हर व्यक्ति के सामने उसके सम्बन्ध में अपने विचार रखते चलें। यह सदाचार नहीं है। दूसरों की भावनाओं का ध्यान न रखते हुए, स्वेच्छापूर्वक अपने विचारों को प्रकट करते रहना आर्जव नहीं है। यह कम-से-कम अविचार तो है ही; परन्तु अधिक बढ़ने पर यह उद्दण्डता है। यह साधक को शोभा नहीं देता। जो आपको सत्य बोलने तथा स्पष्ट बोलने की शिक्षा देता है, वही आपके लिए यह भी उपदेश देता है कि 'मित भाषण, मधुर भाषण कीजिए।' मन आपको स्पष्टवादिता के बहाने दूसरों को अपमानित करने के लिए प्रोत्साहित कर सकता है। अप्रिय सत्य को न कहा जाये तो अच्छा ही है। यदि कहना अनिवार्य है तो उसे मधुर शब्दों में नम्रतापूर्वक कहिए। ''दूसरों की भावनाओं पर आघात न पहुँचायें''—यह उपदेश उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना कि सत्य बोलना। सत्य तथा अहिंसा दोनों को साथ-साथ चलना चाहिए। अपना अध्ययन कीजिए। मन का निरीक्षण कीजिए।

अब दूसरा सिद्धान्त है—''वैराग्य तो वास्तव में मानसिक अवस्था है, मानसिक अनासक्ति है।'' मन इस सिद्धान्त के द्वारा अपने अविवेकपूर्ण विषय-परायण जीवन का भी समर्थन करने लगता है। तर्क यही रहेगा—''हाँ, मैं तो इन सभी से आसक्त नहीं हूँ। मैं तो एक क्षण में ही इनसे परे जा सकता हूँ। मैं तो स्वामी की भाँति इनका उपभोग करता हूँ। मैं तो मानसिक रूप से अनासक्त हूँ।'' विषयों के सम्पर्क ने विश्वामित्र जैसे तपस्वियों को गिरा डाला है। अतः वैराग्य को आसान न समझिए। श्रमपूर्वक वैराग्य का अर्जन कीजिए। सावधानीपूर्वक वैराग्य की रक्षा कीजिए। सावधान रहिए। मन का निरीक्षण कीजिए।

स्वामी शिवानन्द

शिवा के प्रवचन – देहरादून में :

चिकित्सक के रूप में रोगी

परम पूज्य श्री स्वामी वेंकटेशानन्द जी महाराज

(पूर्व-अंक से आगे)

१४ दिसम्बर, १९५०

शहनशाह सर्वहितकारी संघ

८ बजे प्रातः जब हम अभी अपनी चाय ही पी रहे थे, एक साधु चिकित्सालय में आ पहुँचा। वह देहरादून से लगभग सात मील दूर मसूरी की सड़क पर स्थित राजपुर के एक सुप्रसिद्ध सन्त, शहनशाह जी महाराज का प्रतिनिधि था। शहनशाह जी ने सुना था कि शिवा देहरादून के एक चिकित्सालय में हैं और वह शिवा के स्वास्थ्य को ले कर बहुत चिन्तित थे। वे गत कल सायं में चिकित्सालय में आये भी थे किन्तु शिवा के बाहर गये होने के कारण वे उनसे व्यक्तिगत रूप से मिल नहीं सके थे। इसीलिए, उन्होंने आज प्रातः ही यह जानने के लिए कि क्या शिवा अभी चिकित्सालय में हैं और उनका स्वास्थ्य कैसा है, अपना सन्देशवाहक भेजा था। सन्देशवाहक शिष्य को यह निर्देश दे कर भेजा गया था कि वह शिवा को शहनशाह जी की स्टेशन-वैगन गाड़ी में उनके राजपुर के आश्रम में अपने साथ ले आयें।

शिष्य ने सानुरोध आग्रह किया कि शिवा अपनी पावन उपस्थिति से आश्रम को सुशोभित करें।

''ठीक है, मैं चलूँगा। किस समय?'' शिवा ने पूछा।

''जिस समय भी आपको सुविधा हो, महाराज।''

शिवा ने डॉ. रॉय की ओर देखा। डॉक्टर उलझन में थे, क्योंकि शिवा के देहरादून के आवास-काल के लिए पहले से ही समस्त कार्यक्रम निश्चित हो चुका था, जिसके बीच कोई भी रिक्त समय शेष नहीं रहा था।

''ठीक है। तो फिर हम अभी, इसी समय चल पड़ते हैं, बाद में शायद सम्भव न हो सके,'' सबको आश्चर्यचकित करते हुए शिवा ने कहा।

एक मिनट में ही हम चिकित्सालय से बाहर आ गये। जैसे ही हम गाड़ी की ओर बढ़े, सर्वप्रथम शिवा ने जय गणेश, जय गुरु और महामन्त्र का कीर्तन किया। जब हम चिकित्सालय के कोने से मुड़े तो सूर्य के प्रकाश के दर्शन हुए। सूर्य के दर्शन होते ही शिवा ने दोनों हाथ जोड़ कर प्रणाम करते हुए सूर्य के ध्यान-मन्त्र बोले और फिर महामृत्युंजय मन्त्र, बाला और पञ्चदशाक्षरी (श्रीविद्या) मन्त्रोच्चारण भी किया।

''मैं कभी भी सूर्य, मृत्युंजय, बाला और श्रीविद्या मन्त्रोच्चारण किये बिना बाहर नहीं जाता, और महामन्त्र के साथ-साथ गणेश भगवान् और गुरु के आशीर्वाद का आह्वान भी अवश्य करता हूँ। इसीलिए मैं जहाँ भी जाता हूँ, मुझे सफलता मिलती है। आपको भी इन मन्त्रों का उच्चारण अवश्य करना चाहिए। मृत्युंजय मन्त्र मुझे मार्ग में हर प्रकार के कष्टों, दुर्घटनाओं और स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं से सुरक्षित रखता है। सूर्य मुझे भरपूर शक्ति प्रदान करता है। देवी माँ मेरी रक्षा करती है। श्रीविद्या मेरी बुद्धि प्रकाशित करती है। महामन्त्र मुझे आन्तरिक क्षमता एवं शक्ति प्रदान करता है।''

मोटरकार हमें सीधा एक निकटवर्ती वकील के आवास पर ले गयी जहाँ शहनशाह जी शिवा की प्रतीक्षा कर रहे थे। वह भी गाड़ी में बैठ गये और गाड़ी अब राजपुर की ओर आगे बढ़ी। शहनशाह जी आयु में शिवा से बहुत बड़े हैं (उनकी आयु ९२ वर्ष की है) और वे शिवा के ऋषिकेश में आगमन के समय से ही एक जाने-माने सन्त हैं। किन्तु शिवा के प्रति उनका श्रद्धापूर्ण भाव अद्भुत है। सम्भवतया, उनका

यह मानना है कि जिस उपलब्धि को पाने में और किसी को दो शताब्दियाँ लग जाती हैं, वह सब शिवा ने २० वर्ष के अल्प समय में प्राप्त कर ली थी। यद्यपि वे शिवा की सक्रियता के प्रशंसक हैं तथापि उनको चिन्ता है कि यह शिवा के शारीरिक स्वास्थ्य को क्षति न पहुँचाये।

''स्वामी जी! आप पर्याप्त कार्य कर चुके हैं। आपने समस्त संसार को जाग्रत कर दिया है! आपका सन्देश सुदूर विदेशों तक भी पहुँच चुका है। आपने असंख्य पुस्तकें लिख दी हैं। अब समय आ गया है कि आप स्वयं को थकाना बन्द कर दें और शेष कार्य युवा पीढ़ी को करने के लिए छोड़ दें। अत्यधिक काम आपके स्वास्थ्य को हानि पहुँचा रहा है,'' शहनशाह जी ने कहा।

कुछ समय के उपरान्त वे पुनः बोले, ''मैं अत्यधिक प्रसन्न हूँ कि आपने मेरी प्रार्थना को स्वीकार किया और मेरे इस आश्रम में आ कर इसे सुधन्य किया। मैंने बहुत समय पहले यहाँ आने के लिए आपसे अनुरोध किया था, किन्तु तब आप आ नहीं पाये थे। किन्तु अब शरीर-स्वास्थ्य के लिए यहाँ आने पर आपने मेरी प्रार्थना पूर्ण कर दी।''

हम आश्रम पहुँच गये थे, जो कि पहाड़ी पर एक एकाकी कुटीर थी जिसमें शहनशाह जी रहते थे। शहनशाह जी तथा संघ की राजपुर शाखा के अध्यक्ष ने कुछेक भजन गाये। शिवा ने कीर्तन किया। शिवा ने दूध और थोड़ा सा पराँठा लिया जिसे शहनशाह जी ने अत्यन्त प्रेम सहित उनके लिए परोसा था।

फिर शिवा आश्रम के प्राथमिक विद्यालय में और अतिथि भवन में भी गये। शिवा ने विद्यालय के बच्चों के साथ महामन्त्र कीर्तन किया और उनको उपनिषदीय परेड भी करवायी।

जब हम वापस हॉस्पिटल के लिए लौट रहे थे तो शिवा ने शहनशाह जी के साथ इससे बीस वर्ष पूर्व मेरठ में हुई भेंट को स्मरण किया। उस समय शहनशाह जी ने शिवा से हिन्दी सीखने का अनुरोध किया था और उन्हें स्वयं सिखाने के लिए भी कहा था। किन्तु कुछ ही दिनों के बाद शिवा हिन्दी पढ़ना बीच में ही छोड़ कर ऋषिकेश आ गये।

और यह ठीक भी है। जब वे आत्म-साक्षात्कार हेतु कठोर साधना कर रहे थे, जब वे मानवता की अथक सेवा में संलग्न थे, स्वर्गाश्रम के साधुओं एवं ग्रामवासियों की सेवा में निरन्तर संलग्न थे, तब उस समय यह किंचित् सी पुस्तकीय-शिक्षा की क्या उपयोगिता हो सकती थी? और फिर सम्भवतया, शिवा जानते थे कि भगवान् ने अँगरेज़ी पढ़े-लिखे, आधुनिकता एवं भौतिकता में लिप्त भारतीय और विदेशी स्त्री-पुरुषों को सही मार्ग दिखाने के लिए, पुनः शिक्षित करने के लिए तथा आध्यात्मीकरण करने के लिए उनका चयन किया है। वे अपने अँगरेज़ी के ज्ञान से सन्तुष्ट थे और किसी अन्य भाषा में कुशलता पाने की ललक भी उनमें नहीं थी। यह स्पष्टतया दर्शाता है कि शिवा अपने जीवन के विशेष लक्ष्य के प्रति पूर्ण रूप से जागरूक थे।

पंजाब और उत्तर प्रदेश की अपनी प्रवचन-यात्राओं के समय भी, और यहाँ तक कि जब उन्हें अधिकांश रूप से अँगरेज़ी न जानने वाले भक्त श्रोताओं को भी सम्बोधित करना पड़ा, तब भी लोग उन्हें अँगरेज़ी भाषा में बोलते हुए सुनते रहे, जब कि अन्य किसी भी वक्ता के एक भी शब्द अँगरेजी में बोलने पर उसकी खिल्ली उड़ाते हुए शोर मचा देते। वे सब उनके दर्शन करने में, किसी भी भाषा में उन्हें बोलते हुए सुनने में ही सन्तुष्ट थे। और उनके साथ अँगरेज़ी जानने वाले कोई-न-कोई लोग होते थे जो प्रवचन का हिन्दी में अनुवाद करके बता दिया करते थे। इससे स्पष्ट होता है कि शिवा की एक अलग भूमिका थी जिसे उन्होंने निभाना था, और वह विश्व के अँगरेज़ी भाषी लोग थे।

शहनशाह जी शिवा को अपनी स्टेशन-वैगन में दोपहर ११ बजे वापस हॉस्पिटल ले आये और फिर स्वयं अपने आश्रम चले गये।

(क्रमशः)

(अनुवादिका : स्वामी शिवाश्रितानन्द माता जी)

शिवानन्द ज्ञानकोष :

महाभारत

परम पावन श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

(पूर्व-अंक से आगे)

शिक्षाएँ

महाभारत का सन्देश सत्यता और धार्मिकता है। इस महाकाव्य से पाठकों में नैतिक जाग्रति आती है जो उन्हें सत्य और धर्म के पथ पर आरूढ़ रहने का आग्रह करती है। धार्मिक तथा भला कर्म करने का बल देती है, जिससे विश्व की माया तथा विषयों से वैराग्य उत्पन्न हो कर शाश्वत आनन्द तथा अमरत्व की प्राप्ति होती है। लोगों को युधिष्ठिर के आचरण के अनुसार व दुर्योधन के कुकृत्यों के विरुद्ध चलने की प्रेरणा मिलती है। इससे जीवन-लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति तथा शाश्वत आनन्द की प्राप्ति होती है। महाभारत की मूल शिक्षा का सार यही है।

ईश्वर-कृपा से जीवन के अनेक क्षेत्रों में इस उज्ज्वल और प्राचीन महाकाव्य की शिक्षा आपका पथ-प्रदर्शन करे। आप धर्म से च्युत न हों। महाभारत के पात्र आपको प्रेरणा देते रहें। आपको युधिष्ठिर की सत्य-प्रियता, भीष्म की पवित्रता, अर्जुन की साहसिकता और कर्ण की दानशीलता प्राप्त हो। महाभारत के रचयिता, भगवान् हरि के अवतार, शूरवीरों के प्रपितामह भगवान् व्यास की जय हो! उनका आशीर्वाद सदा-सर्वदा आप सबको प्राप्त हो!

मनुष्य

शिशु माँ-माँ करता है। बाल्यावस्था आने पर कूदता-नाचता और खिलौनों से खेलता है। विद्यार्थी होने पर पुस्तकें ले कर पाठशाला जाता है। बड़े होने पर उपाधियाँ प्राप्त करता है। यौवनावस्था में मूँछें मरोड़ता है, झगड़ता है और सुन्दरियों के पीछे भागता है। तदुपरान्त प्रसिद्धि-प्राप्ति की लगन लग जाती है। वह धन संग्रह करता है। विवाह-बन्धन में बँधता है, सन्तानवान् होता है। वृद्धावस्था में चश्मे का प्रयोग करता है, बनावटी दाँत लगवाता है और छड़ी के सहारे डगमगा कर चलने लगता है। अन्त में, एक दिन मृत्यु को प्राप्त होता है।

पानी की एक बूँद गर्म तवे पर पड़ते ही सी..सी...की ध्वनि उत्पन्न कर, वह जल-बूँद वाष्प में रूपान्तरित हो जाती है। वैसे ही एक मनुष्य थोड़े से समय के लिए कोलाहल कर, अदृश्य हो जाता है। इसी को जीवन कहते हैं।

मनुष्य है क्या? वह क्या बन सकता है? मन क्या है? उत्तम अवस्था कौन सी रहती है? इनका परिचय प्राप्त करना वास्तव में लाभदायक रहेगा।

शरीर, मन और आत्मा

पाश्चात्यों के लिए मनुष्य एक प्राणी है, जो मन-सम्पन्न और आत्मा का स्वामी है। एक हिन्दू के लिए मनुष्य वस्तुत: आत्मा है, जो मनोवृत्तियों को शारीरिक क्रियाओं से भौतिक स्तर पर व्यक्त करता है।

मनुष्य शरीर-युक्त आत्मा है। मनुष्य वास्तव में आध्यात्मिक प्राणी है। मनुष्य जीवन्त है, क्योंकि वह

तत्त्वत: आत्मा है। मनुष्य सार-रूप में है ही अन्तरात्मा। मनुष्य वस्तुत: ईश्वर है। भौतिक शरीर तथा बुद्धि का आधार आत्मा ही तो है, इस तथ्य से मनुष्य अनभिज्ञ है। आत्म-साक्षात्कार हो जाने पर मनुष्य को सुरक्षा, सुनिश्चितता, पूर्णता, मुक्ति, स्वाधीनता, अमरत्व और परमानन्द-प्राप्ति हो जाती है।

सभी मनुष्य मूलत: समान ही हैं। एक ही आत्मा सबमें वास करती है। चेतना भी सबमें एक जैसी है, परन्तु मन और जीवन-पद्धति में पृथ्वी-आकाश का अन्तर रहता है।

विद्युत् सभी बल्बों में समान रूप में स्थित है, परन्तु बल्बों के रंग की विभिन्नता के कारण, भिन्नता दृष्टिगोचर होती है। इसी प्रकार मनुष्य भी मन और प्रकृति में भिन्न होने के कारण असमान दिखते हैं।

मनुष्य 'शरीर, मन और आत्मा' की त्रिमूर्ति है। आत्मा पर मन और प्रकृति का आवरण रहता है, इसी कारण वह दिव्यता का भान नहीं कर पाता। जब तक वह मन और प्रकृति के बन्धन से मुक्त नहीं हो जाता, उसे आत्म-ज्ञान हो ही नहीं सकता।

आत्मा की अमरता

मनुष्य शरीर नहीं है। न तो इन्द्रियाँ मनुष्य है, न ही मन। यह तो इसका रथ कहिए, या उपाधि कहिए। शरीर तथा मन परिवर्तनशील हैं, इनका ह्रास होता रहता है और अन्त में ये विनष्ट हो जाते हैं, जब कि वस्तुत: मनुष्य अमर आत्मा है, स्थाई, अजन्मा, अनादि, अनन्त, नित्य, सनातन और पूर्ण है।

शरीर तुम्हारा है, किन्तु तुम शरीर नहीं हो। मन तुम्हारा है, पर तुम मन नहीं हो। जैसे बढ़ई के यन्त्र होते हैं वैसे ही ये तुम्हारे यन्त्र हैं। यह शरीर आत्मा का यन्त्र है, सेवक है, न कि इसका कारागार।

इस शरीर को जाज्वल्यमान स्वत: प्रकाशित आत्मा का मन्दिर मानिए। यह स्वत: प्रकाशित आत्मा शरीर तथा मन की सभी शक्तियों का नियन्त्रण करने वाला परिचालक है। ज्ञातव्य यह है कि आपकी श्वासक्रिया प्राणशक्ति पर निर्भर है न कि शरीर पर।

मात्र मृत्यु ही पूर्ण अन्त नहीं है। मृत्यु पूर्णतया विनाशक नहीं है। न ही मृत्यु कार्य-कारण परम्परा का अन्त है। शरीर की मृत्यु के साथ इसमें अवस्थित इसके परिचालक, आत्मा का अन्त नहीं हो पाता। मनुष्य की आत्मा अमर है। जैसे मनुष्य ओवरकोट उतार फेंकता है, उसी प्रकार आत्मा इस भौतिक शरीर को मृत्यु-समय पर एक ओर रख देती है।

आत्मा का आवरण शरीर है। आत्मा ही शरीर रूपी रथ की संचालक है। जब शरीर का अन्त हो जाता है, आत्मा का अस्तित्व रहता ही है। आत्मा शाश्वत है। तुम्हारे विचार, स्मरणशक्ति, मानसिक शक्ति तथा सूक्ष्म शरीर भी विनष्ट नहीं होते।

मनुष्य का पतन

मनुष्य इच्छाओं, लालसाओं, भावनाओं, अभिलाषाओं तथा विचारों का समन्वय है। वह इच्छाओं, संकल्पों और कर्मों का पिण्ड है। यदि वासना की अग्नि बुझ जाये तो उसका व्यक्तित्व भी लुप्त हो जाता है। कर्म विचार का ही परिणाम है। विचार ही क्रिया का वास्तविक स्वरूप है। मनुष्य वांछित विषयों की प्राप्ति हेतु कर्म करता है। नेत्र मूँद कर शान्त बैठ जाने को निष्क्रियता की संज्ञा नहीं दे सकते। उसका मन तो योजनाएँ बनाने में कर्मशील रहता है। इच्छा और कर्म अपूर्णता के ही द्योतक हैं। सीमितता और अपूर्णता का परिणाम ही तो इच्छा है।

मनुष्य अपूर्ण तथा परिमित है। मानव-जीवन परिमितताओं तथा अपूर्णताओं से भरपूर है। मनुष्य भौतिक सुख के लिए भौतिक विषयों पर निर्भर है। वह इन बाह्य लौकिक विषयों से सदैव अपना सम्बन्ध बनाये रखता है। इच्छाएँ ही उस पर अधिकार जमाये रहती हैं और उत्तेजित करती रहती हैं। वह वासनाओं और ऐन्द्रिक विषयों का दास बन जाता है।

इच्छाएँ ही मनुष्य पर शासन करती रहती हैं और वह ईश्वर से विमुख हो जाता है। परिणामत: उसे निज-स्वरूप दिव्यता की विस्मृति हो जाती है। वह अपनी सत्ता पृथक् मान लेता है। परम तत्त्व से पृथकता का कारण उसकी अविद्या तथा अहंकार हैं। तभी तो वह दु:ख पाता है। अपनी मूल दिव्य असीम सत्ता को भूल बैठता है।

यदि मनुष्य अपने अहंकार को मार ले, अपने को पृथक् न माने, इच्छाओं तथा वासनाओं को वश में कर ले और अपना सम्बन्ध परम सत्ता से जोड़ ले, तो सभी परिमितताएँ, दु:ख और अपूर्णताएँ स्वत: दूर हो जायेंगी और उसे मुक्ति तथा परमानन्द की प्राप्ति हो जायेगी।

मनुष्य एक बहुमुखी प्राणी

मनुष्य एक जटिल सामाजिक प्राणी है। वह एक शारीरिक रचना है, जिसमें रक्त-संचार, पाचन-क्रिया, मल-विसर्जन आदि क्रियाएँ होती रहती हैं। इसके अतिरिक्त विचारने, इन्द्रियों से जानने, स्मरण रखने, मन से कल्पना करने आदि की मानसिक क्रियाएँ भी होती रहती हैं। मनुष्य देखता है, सोचता है, चखता है, सूँघता है और स्पर्श का अनुभव करता है। दार्शनिकों की भाषा में वह भगवान् का रूप है, अपितु स्वयं भगवान् है। निषेधित कर्मों से अपनी दिव्यता खो बैठता है, जिसे वह मानसिक संयम तथा योगाभ्यास से पुन: प्राप्त कर सकता है।

मनुष्य बहुमुखी प्राणी है और इसके कोश भी कई हैं जो इसकी वास्तविकता को आच्छादित किये हुए हैं। यह कभी तो अपने-आपको अन्नमय-कोश मान लेता है और कभी विज्ञान-कोश से ऐक्य स्थापित कर लेता है, कभी अपने वास्तविक रूप से नाता जोड़ लेता है जो दोनों का नित्य-साक्षी है। मनुष्य के अत्यावश्यक उद्देश्य, भले ही अपने स्थान पर वे कितने ही महत्त्वपूर्ण हों, आध्यात्मिक व्यक्तित्व को विकृत किये बिना चिरकाल तक वश में नहीं रख पाते।

मनुष्य तीन अंशों का अर्थात् मनुष्यत्व, पशुत्व तथा दिव्यत्व का सम्मिलन है। वह सीमित बुद्धि, नश्वर शरीर, अल्प ज्ञान और अल्प शक्तियुक्त स्पष्टतया मानव ही है। काम, क्रोध और घृणा ही पाशविकता है। विश्व-चेतना का प्रतिबिम्ब उसकी बुद्धि का आधार है। अत: वह भगवद्-स्वरूप है। पशुत्व व अविद्या का मूलोच्छेदन होने पर, निरादर और हानि की सहन-शक्ति की प्राप्ति पर वह दिव्य रूप हो जाता है।

सृष्टि की सर्वोत्तम रचना मनुष्य है। वह भगवद्-स्वरूप है। वह दिव्य ज्योति है। वह ईश्वर का प्रतिरूप है। वस्तुत: वह ईश्वर से संयुक्त ही है। वह विचार करता है, अनुभव करता है, ज्ञान प्राप्त करता है। वह विवेकशील व चिन्तनशील है। वह ध्यानाभ्यास में सक्षम है। परिणामत: आत्म-ज्ञान प्राप्त करता है। सामान्य प्राणियों की भाँति खाना, पीना, सोना, मैथुन आदि क्रियाओं में रत होने पर भी वह श्रेष्ठतम प्राणी है।

(क्रमश:)

(अनुवादक : श्री स्वामी अर्पणानन्द जी महाराज)

बाल जगत्

कर्म योग

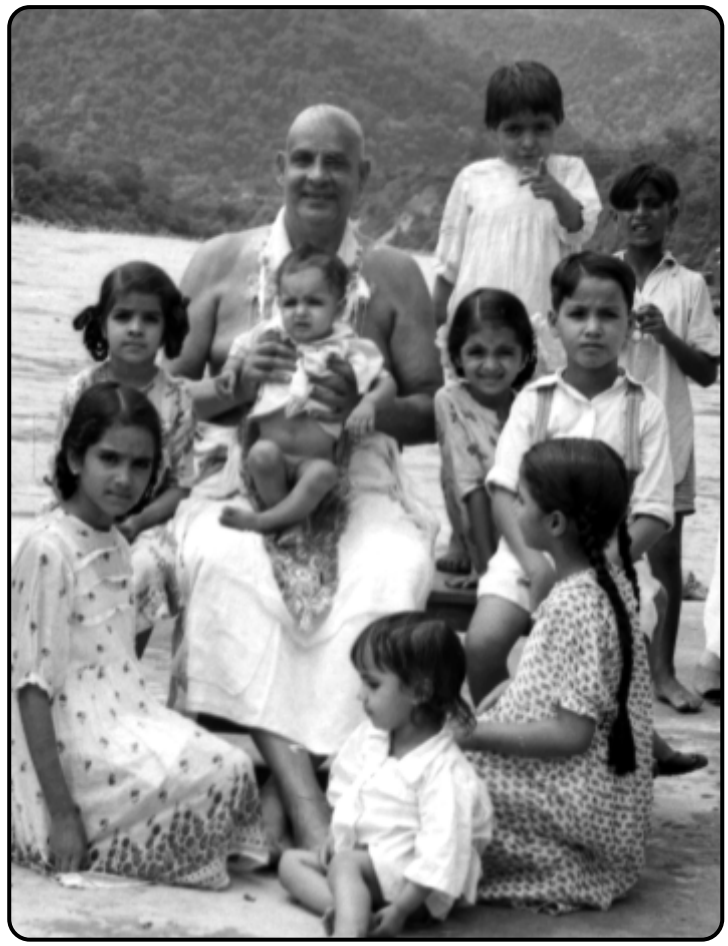

प्रिय अमृत पुत्रो!

अनुकूलनशीलता के गुण का विकास कीजिए। सदा आत्म-भाव तथा नारायण-भाव के साथ सेवा कीजिए।

काम करते हुए सीताराम, राधेश्याम अथवा हरे राम का कीर्तन कीजिए। सदा ईश्वर को याद करिए।

सारे प्रकार के अभिमान का परित्याग कीजिए। वैराग्य अभिमान, सेवा अभिमान, त्याग अभिमान, कर्तृत्व अभिमान, पुरुषत्व अभिमान एवं स्त्रीत्व अभिमान, डॉक्टर अभिमान एवं जज अभिमान को विनष्ट कीजिए।

अपने कर्म के लिए प्रशंसा अथवा धन्यवाद की अपेक्षा न रखिए।

स्वामी शिवानन्द

सद्गुणों का अर्जन

धैर्य (Patience)

धैर्य, धैर्यवान् रहने अथवा शान्तिपूर्वक सहन करने का गुण है। यह बिना शिकायत किए कष्ट सहन करने का गुण है।

एक धैर्यशील व्यक्ति सरलता से उत्तेजित नहीं होता है। वह विपरीत परिस्थितियों में शान्त-प्रशान्त रहता है।

छोटी-छोटी बातों में धैर्यशील रहिए। दैनिक समस्याओं एवं दु:खों को शान्तिपूर्वक सहन करिए। आप महान् शक्ति का अर्जन कर सकेंगे तथा गम्भीर विकट परिस्थितियों, दु:खों एवं कष्टों को सहन कर पायेंगे।

धैर्य क्रोध के नियन्त्रण हेतु एक विशिष्ट उपाय है। यह क्रोध के लिए पैन्सिलीन इन्जेक्शन है।

धैर्य शक्ति है। यह महानतम एवं उच्चतम बल है। धैर्य से आश्चर्यजनक कार्य सम्पन्न हो सकते हैं। यह पर्वतों को हिला सकता है। धैर्य से इस विश्व में कुछ भी प्राप्त किया जा सकता है। एक धैर्यवान् व्यक्ति जो चाहे वह प्राप्त कर सकता है।

स्वामी शिवानन्द

दुर्गुणों का नाश

अविचारपूर्वक–पक्षपात अर्थात् पूर्वाग्रह (Prejudice)

न्यायपूर्ण एवं निष्पक्ष निर्णय लेने के लिए आवश्यक तथ्यों एवं कारणों के परीक्षण के बिना, कोई निर्णय लेना अथवा धारणा बना लेना पूर्वाग्रह अथवा पूर्वधारणा है। यह किसी के पक्ष में अथवा उसके विरुद्ध अतर्कसंगत पूर्वधारणा है। यह पक्षपात करना है।

पूर्वाग्रह सत्य का द्वार बन्द कर देता है तथा प्राय: विनाशात्मक त्रुटि की ओर ले जाता है।

पूर्वाग्रह एक कुहरा है जो आपकी दृष्टि को धुँधली कर देता है तथा अच्छे एवं शुभ वस्तु–पदार्थों को ढक देता है।

पूर्वाग्रही व्यक्ति कभी किसी के लिए अच्छा नहीं बोलते हैं तथा जिनसे वे द्वेष करते हैं, उनके लिए कभी अच्छा सोचते भी नहीं हैं।

पूर्वाग्रह अज्ञान की सन्तान है। यह प्रगति के मार्ग में महान् बाधा है।

इसके विनाशात्मक प्रभावों को सद्भावना द्वारा दूर किया जा सकता है।

स्वामी शिवानन्द

भगवान् की सुयोजना

एक बार की बात है कि एक गधा था। उसे अन्य सभी गधों की भाँति यह दृढ़ विश्वास था कि वह अत्यन्त बुद्धिमान् है और सारे संसार में उससे बढ़ कर बुद्धिमान् अन्य कोई नहीं है।

एक दिन जब वह एक बगीचे में घूम रहा था तो उसने देखा कि सेबों के एक बड़े वृक्ष पर छोटे–छोटे हल्के लाल रंग के सेब लगे हुए थे और फिर उसने यह भी देखा कि एक कद्दू के खेत में कोमल सी

उज्बेक की लोक कथा

एक बेल पर बड़े-बड़े कद्दू लगे हुए थे जिनके भार से बेल धरती से लगी पड़ी थी।

उसने पुनः एक बार ऊपर पेड़ पर लगे छोटे-छोटे सेबों की ओर घूर कर देखा और फिर नीचे पड़े हुए भारी-भरकम कद्दुओं को, और फिर अत्यन्त निराश हो कर उसने अपने कान हिलाये।

''कितनी मूर्खता से इस संसार में सब-कुछ आयोजित किया गया है!'' झुँझलाते हुए उसने कहा, ''यदि मुझे, एक अत्यन्त बुद्धिमान् गधे को अपने अनुसार यह सब नियोजित करने देते तो मैं प्रत्येक वस्तु को एक अन्य अच्छे ढंग से सुनिश्चित करता।''

उसके शब्द पास से उड़ कर निकलती हुई एक चिड़िया को सुनायी दिये तो उसकी उत्सुकता जगी और उसने तुरन्त चहचहा कर पूछा, ''किन्तु माननीय गधे जी, ज़रा बताइए तो कि आपको इस योजना में ऐसा क्या अनुचित लगा?''

''क्या स्वयं आपको पता नहीं चलता?'' गधे ने शालीनतापूर्वक कहा, ''किञ्चित् उन विशाल वृक्षों को देखें जिन पर ऐसे छोटे-छोटे सेब लगे हुए हैं जिनका आकार किसी बालक की मुष्टिका से अधिक बड़ा नहीं होगा। और दूसरी ओर, ये बड़े-बड़े कद्दू जो मेरे शिर से भी अधिक बड़े हैं, ये कैसी सूखी बारीक बेल पर लगे हैं!''

''किन्तु यह तो पूर्णतया सही और अत्यन्त बुद्धिमत्तापूर्ण है!'' चिड़िया ने उसके कथन का विरोध करते हुए कहा। गधा क्रोधित हो कर बोला, ''इसमें ज़रा सी भी बुद्धिमानी नहीं है!''

''क्या इससे अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण यह न होता कि उस विशाल वृक्ष के सेबों का आकार कद्दू जितना होता और कोमल सी बेल के कद्दू, सेबों के समान छोटे होते?''

और फिर गधा अपने शरीर को अच्छी तरह से खुजलाने के लिए सेबों के एक बड़े वृक्ष के तने से रगड़ने लगा। जैसे ही वृक्ष पर थोड़ी हलचल हुई, तुरन्त एक सेब गधे के शिर पर ज़ोर से आ कर गिरा।

''हाय! हाय! बेचारा मेरा शिर!'' गधा चिल्लाया। और चिड़िया खिलखिला कर हँसने लगी।

''देखा! सर्वश्रेष्ठ, सर्वाधिक बुद्धिमान् गधे जी! अपने भाग्य को धन्यवाद दें कि सेबों को कद्दू जैसे बड़े नहीं बनाया, यदि ऐसा किया होता तो आपके शिर का क्या होता?''

वृक्ष से तुरन्त दूर हट कर लम्बी साँस लेते हुए गधे ने कहा, ''आपके कथन में कुछ तो है!''

स्वामी शिवानन्द

मुख्यालय आश्रम में श्री रामनवमी का महोत्सव

शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशान्तिप्रदं ब्रह्माशम्भुफणीन्द्रसेव्यमनिशं वेदान्तवेद्यं विभुम् ।
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरिं वन्देऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूड़ामणिम् ।।

''उन भगवान् श्रीहरि को हम प्रणिपात करते हैं, जो श्री राम के नाम से जाने जाते हैं, जो रघुवंश शिरोमणि हैं, जो समस्त सम्राटों के चूड़ामणि हैं, जो करुणा के मूलस्रोत हैं, जो अपनी ही माया का आश्रय ले कर मनुष्य रूप में अवतरित हुए हैं, जो समस्त देवताओं में सर्वोपरि हैं, जो ब्रह्मा, शम्भु और आदिशेष द्वारा सतत पूजित हैं, जो समस्त जगत् के ईश्वर हैं और जो मोक्ष के रूप में मानव मात्र को परम शान्ति प्रदान करते हैं, जो शान्त, शाश्वत, अप्रमेय, अनघ और सर्वव्यापक हैं तथा वेदों द्वारा ज्ञातव्य हैं।''

श्री रामनवमी का पावन दिवस मुख्यालय आश्रम में ३० मार्च २०२३ को अत्यन्त श्रद्धा, भक्ति एवं हर्षोल्लासपूर्वक मनाया गया। कार्यक्रम के शुभारम्भ के रूप में ५ से २४ मार्च तक पावन

दिव्य नाम मन्दिर में श्री वाल्मीकि रामायण का मूल पाठ किया गया।

२५ से २८ मार्च तक श्री विश्वनाथ मन्दिर परिसर में पावन मन्त्र, 'श्री राम जय राम जय जय राम' का नित्य दो घण्टे के लिए अखण्ड कीर्तन किया गया। २९ मार्च को प्रातः ७ से सायं ६ बजे तक इस दिव्य मन्त्र का अखण्ड सामूहिक कीर्तन किया गया जिससे भगवान् के अवतरण के स्वागत में, समस्त वातावरण दिव्य तरंगों से आपूरित हो गया।

श्री रामनवमी के पावन दिवस ३० मार्च को कार्यक्रम का शुभारम्भ प्रातःकालीन प्रार्थना एवं ध्यान सत्र, प्रभातफेरी और यज्ञ से किया गया। फिर प्रातः ९ बजे से दोपहर १२ बजे तक अत्यन्त भव्य रूप में सजाये गये श्री विश्वनाथ मन्दिर के गर्भगृह में भगवान्

श्री राम की वैदिक मन्त्रों तथा अत्यन्त सुमधुर भजन-कीर्तन सहित महापूजा की गयी जिसमें सभी उपस्थित भक्तों को व्यक्तिगत रूप से अभिषेक एवं अर्चना में भाग लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इसके उपरान्त श्री वाल्मीकि रामायण तथा श्री रामचरितमानस में से अवतार सर्ग का सुमधुर पारायण किया गया। आरती और

प्रसाद वितरण के साथ कार्यक्रम समाप्त हुआ।

रात्रि सत्संग में आश्रम के संन्यासियों, ब्रह्मचारियों तथा भक्तों द्वारा भगवान् श्री राम और सद्गुरुदेव को पुष्पांजलि के रूप में सुमधुर भजन-कीर्तन समर्पित किये गये। आरती और प्रसाद वितरण के साथ कार्यक्रम समाप्त हुआ।

भगवान् श्री राम और सद्गुरुदेव की दिव्य कृपा सब पर हो!

श्रीमद् भागवत महापुराण के ११वें स्कन्ध पर प्रवचन

पूज्य श्री रमण चरण तीर्थ ब्रह्मश्री नोचुर वेंकटरमण जी, तिरुवन्नमलै द्वारा मई २०२२ में श्रीमद् भागवत महापुराण के ११वें स्कन्ध पर दिये गये प्रवचनों की ही शृंखला में, पावन समाधि मन्दिर के रात्रि सत्संग में २० से २९ मार्च २०२३ तक आत्मोत्थापक प्रवचन दिये गये। श्रीमद् भागवत महापुराण के ११वें स्कन्ध में भगवान् श्री कृष्ण द्वारा उद्धव को दिये गये उपदेशामृत के सन्दर्भ में वर्णन करते हुए श्री वेंकटरमण जी ने सबको आत्मज्ञान प्राप्त करने हेतु गम्भीरतापूर्वक प्रयत्न करने के लिए प्रेरित किया क्योंकि निजस्वरूप का अज्ञान ही समस्त कष्टों का और बन्धन का कारण है। २९ मार्च को दो पुस्तकों के विमोचन तथा ब्रह्मश्री नोचुर वेंकटरमण जी को सम्मानित करने के साथ रात्रि सत्संग समाप्त हुआ।

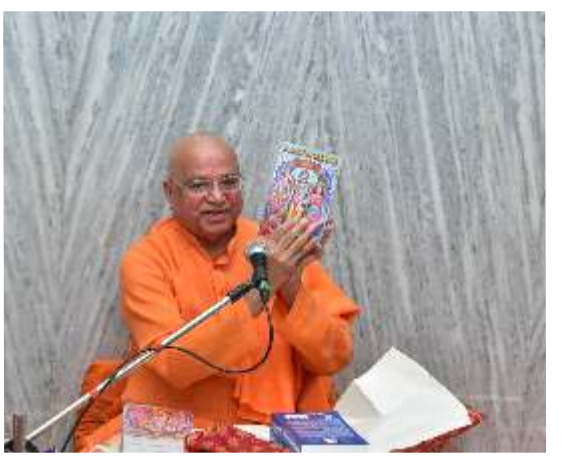

भगवान् श्री कृष्ण तथा सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की कृपावृष्टि सभी पर हो!

९६वें योग–वेदान्त कोर्स का उद्घाटन समारोह

योग–वेदान्त के ९६वें कोर्स का उद्घाटन १ मार्च २०२३ को वाई.वी.एफ़.ए हॉल में किया गया। भारत के विभिन्न भागों से कुल ३८ विद्यार्थी इस कोर्स में भाग लेने के लिए आये।

उद्घाटन कार्यक्रम का शुभारम्भ दुर्गा माता तथा दत्तात्रेय भगवान् के पावन मन्दिरों में पूजा के साथ किया गया। प्रारम्भिक प्रार्थनाओं तथा श्री स्वामी शिवभक्तानन्द जी महाराज के स्वागत सन्देश के उपरान्त परम पूज्य श्री स्वामी योगस्वरूपानन्द जी महाराज द्वारा पावन दीप प्रज्वलन के साथ कोर्स का उद्घाटन किया गया। तदुपरान्त ब्रह्मचारी श्री गोपी जी ने विद्यार्थियों को स्वामीजियों तथा श्रोताओं से परिचित करवाया।

श्री स्वामी योगस्वरूपानन्द जी महाराज ने अपने उद्घाटन प्रवचन में इस कोर्स में सम्मिलित होने के लिए विद्यार्थियों को प्राप्त होने वाले सौभाग्य की सराहना करते हुए उन्हें इसके प्रति जागरूक किया और साथ ही उन्हें प्रेरित किया कि वे अपनी कक्षाओं में नियमित रूप से ध्यानपूर्वक भाग लें तथा सद्गुरुदेव के पावन आश्रम में रहने हेतु मिले हुए इस अनमोल समय के एक–एक क्षण का सदुपयोग करें। माँ सरस्वती की पूजा तथा पावन प्रसाद वितरण के साथ कार्यक्रम समाप्त हुआ।

सर्वशक्तिमान् परमात्मा तथा सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के आशीर्वाद सब पर हों!

साधक इस व्यावहारिक जगत् के तूफ़ानों के बीच संग्राम करता है। हर कदम पर कठिनाइयाँ आ खड़ी होती हैं। विकट परिस्थितियाँ एवं प्रलोभन समय–समय पर उस पर आक्रमण करते हैं। वह वीरतापूर्वक उन कठिनाइयों का सामना करता है; परन्तु अन्ततः वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि इन बाधक परिस्थितियों से अलग रह कर ही साधना करना उचित होगा। वह संसार के व्यावहारिक कार्यों के कोलाहल से अलग हट कर किसी आध्यात्मिक संस्था में जाता है तथा कुछ समय निष्काम सेवा में लगा कर अपनी साधना क्रमिक रूप से करता है; परन्तु कुछ साधना करने के उपरान्त वह अपने में अधिकाधिक शुद्धता, नैतिक तथा आध्यात्मिक प्रगति को न देख कर उसके विपरीत अधिकाधिक मलिनता, बुरे विचार तथा आवेगों का अनुभव करने लगता है। कैसा आश्चर्य है यह? क्या उसका पतन हो रहा है? कैसी विचित्र स्थिति से उसको गुजरना पड़ रहा है? क्या वह सचमुच प्रकाश की ओर मुड़ रहा है या अधिकाधिक अन्धकार की ओर? ये विचार उसके मन को अशान्त कर डालते हैं। यदि वह धैर्यपूर्वक अपने मन का निरीक्षण एवं विश्लेषण करे, तो वह शीघ्र ही सत्य को जान पायेगा और उसका मन शान्त हो जायेगा।

स्वामी शिवानन्द

श्री गुरुपूर्णिमा, साधना–सप्ताह और सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की पुण्यतिथि आराधना के पावन दिवस का कार्यक्रम

मुख्यालय आश्रम में ३ जुलाई, २०२३ को श्री गुरुपूर्णिमा का परम पावन महोत्सव मनाया जायेगा तथा सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की पुण्यतिथि आराधना की ६० वीं वर्षगाँठ का पावन दिवस श्रावण मास के कृष्ण पक्ष की नवमी तिथि, अर्थात् ११ जुलाई, २०२३ को मनाया जायेगा। इन दो कार्यक्रमों के मध्य के समय में ४ जुलाई से १० जुलाई तक साधना–सप्ताह आयोजित किया जायेगा।

आप सब जानते हैं कि ६० वर्ष पूर्व श्रावण मास के कृष्ण पक्ष की नवमी तिथि अर्थात् १४ जुलाई, १९६३ को परम पूज्य गुरुदेव अपनी देह त्याग करके परमात्मा में विलीन हो गये थे। श्री गुरुदेव की पुण्यतिथि आराधना की ६० वीं वर्षगाँठ मनाने के लिए १२ मई से १० जुलाई २०२३ तक का ६० दिवसीय अखण्ड महामन्त्र संकीर्तन कार्यक्रम का आयोजन किया गया है।

जो भक्त उपर्युक्त कार्यक्रम में सम्मिलित होने के इच्छुक हैं, उनसे अनुरोध है कि वे पर्याप्त समय पूर्व ई–मेल या पत्र द्वारा अपने पूरे डाक–पते सहित हमें सूचित करें कि वे कितने लोग, कब–से–कब तक के लिए आयेंगे।

शारीरिक रूप से किसी भी प्रकार से असमर्थ अथवा स्वास्थ्य सम्बन्धी किसी समस्या से ग्रस्त व्यक्तियों को परामर्श दिया जाता है कि वे साधना–सप्ताह के कठिन कार्यक्रमों को देखते हुए आश्रम में आने के लिए किसी अन्य समय का चयन कर लें। इसके साथ ही, श्रावण मास होने के कारण भारी संख्या में यात्रियों का आवागमन भी रहता है जिसके कारण समस्त उत्तराखण्ड का यातायात प्रभावित रहता है।

यह वर्षाऋतु का समय होने के कारण उत्तराखण्ड के सम्पूर्ण क्षेत्र में भारी वर्षा की सम्भावना रहती है; अतः आगामी समारोह में आने वाले भक्त अपने साथ तदनुकूल टॉर्च, छाता इत्यादि आवश्यक वस्तुएँ ले कर आयें।

भारी संख्या में आने वाले भक्तों की आवासीय व्यवस्था में कठिनाई को देखते हुए आश्रम को अन्य निकटवर्ती आश्रमों में आवास–स्थान लेने के लिए अनुरोध करना पड़ता है। आशा करते हैं कि अतिथि भक्त हमें प्रेमपूर्वक इसमें अपना सहयोग देंगे। भक्त अतिथियों से निवेदन है कि कार्यक्रम आरम्भ होने से केवल एक या दो दिन पूर्व ही आयें और समारोह समापन के बाद एक–दो दिन से अधिक रुकने का आग्रह न करें।

सद्गुरुदेव के आशीर्वाद सभी पर हों!

शिवानन्दनगर **—द डिवाइन लाइफ सोसायटी**
१ अप्रैल, २०२३

कृपया सावधान रहें

द डिवाइन लाइफ सोसायटी के समस्त सदस्यों, भक्तों एवं शुभचिन्तकों की सूचनार्थ यह बताया जा रहा है कि कुछ धोखेबाज व्यक्तियों (Fraudsters) ने डिवाइन लाइफ सोसायटी की आधिकारिक (Official) वेबसाइट की नकल करते हुए एक वेबसाइट **https://sivanandaashram.co.in/**, एवं ई मेल आई डी **info@ sivanandaashram.co.in** (फोन नं. ९६६८४६१५३८) बनायी है ताकि वे सामान्य जन को भ्रमित करके शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश, उत्तराखण्ड में कमरे बुक करने और योग-कोर्स में नामांकन करने के नाम पर उनसे धन एकत्रित कर सकें।

जो भक्तजन सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज एवं उनके पावन आश्रम के प्रति समर्पित हैं, वे भली-भाँति जानते हैं कि आश्रम में किसी भी प्रकार की सेवा के लिए कोई धनराशि नहीं ली जाती है तथा आश्रम अतिथियों एवं भक्तों को फोन अथवा व्हाटस ऐप (Whatsapp) के माध्यम से कमरे बुक करवाने अथवा योग-कोर्स में नामांकन करवाने की अनुमति नहीं देता है। इसलिए, आप सब ऐसी नकली वेबसाइट्स एवं ऐसे धोखेबाज व्यक्तियों से सावधान रहें।

कृपया इस बात का भी ध्यान रखें कि डिवाइन लाइफ सोसायटी की आधिकारिक (Official) वेबसाइट्स **https://www.sivanandaonline.org**. एवं **https://www.dlshq.org** हैं; ई मेल आई डी **generalsecretary@sivanandaonline.org** एवं **gs@sivanandaonline.org** हैं तथा ऑनलाइन डोनेशन पोर्टल **https://donations.sivanandaonline.org** है।

मुक्त पुरुष को जीवन्मुक्त कहते हैं। यद्यपि वह शरीर में रहता है, फिर भी अनुभूति से ब्रह्म के साथ एक है। वह ऐसे कर्मों को नहीं करता जिनसे अन्य शरीरों का निर्माण हो सके। अभिमान से मुक्त होने के कारण कर्म उसे बन्धन में नहीं डालते। वह विश्व-कल्याण के लिए लोक-संग्रह करता है। प्रारब्ध कर्म के अनुसार वह शरीर में रहता है। सारे वर्तमान कर्म ईश्वर की कृपा से विनष्ट हो जाते हैं। जीवन्मुक्त अपने अन्तर्हित प्रभु की प्रेरणा से ही सारे कार्यों को करता है।

स्वामी शिवानन्द

ॐ

महत्त्वपूर्ण सूचना

योग–वेदान्त फॉरेस्ट अकादमी

द डिवाइन लाइफ सोसायटी

पी.ओ. शिवानन्दनगर—२४९१९२, जिला—टिहरी–गढ़वाल, उत्तराखण्ड, भारत

प्रवेश–सम्बन्धी सूचना

दिनांक **३–५–२०२३ से २५–६–२०२३** तक आयोजित ९७ वें द्विमासिक बेसिक योग–वेदान्त (आवासीय) कोर्स में प्रवेश लेने हेतु आवेदन–पत्र आमन्त्रित किये जाते हैं। यह कोर्स, द डिवाइन लाइफ सोसायटी मुख्यालय, शिवानन्दनगर, ऋषिकेश के अकादमी–परिसर में आयोजित किया जायेगा।

इस कोर्स से सम्बन्धित विस्तृत विवरण इस प्रकार है :

१. इसमें केवल भारतीय नागरिक (पुरुष) ही भाग ले सकते हैं।

२. आयु–वर्ग : – २० और ६५ वर्ष के बीच

३. योग्यताएँ : –

(क) तीव्र आध्यात्मिक अभीप्सा तथा योग–वेदान्त के अभ्यास में गहन रुचि रखने वाले स्नातक उपाधिधारी पुरुषों को वरीयता दी जायेगी।

(ख) अभ्यर्थी में अँगरेजी भाषा में धाराप्रवाह वार्तालाप करने की क्षमता होनी चाहिए; क्योंकि शिक्षण का माध्यम अँगरेजी भाषा है।

(ग) अभ्यर्थी का स्वास्थ्य अच्छा होना चाहिए।

४. पाठ्यक्रम का विषय–क्षेत्र : –

(क) भारतीय तथा पाश्चात्य दर्शन के इतिहास का रूपरेखीय अध्ययन, उपनिषदों का अध्ययन, धार्मिक चेतना का परिशीलन, श्रीमद्भगवद्गीता का अध्ययन, पतंजलि की योग–प्रणाली, नारद–भक्तिसूत्र तथा स्वामी शिवानन्द के दर्शन (philosophy) का अध्ययन।

(ख) पाठ्यक्रम पूर्ण होने के उपरान्त परीक्षा आयोजित की जायेगी।

(ग) आसन, प्राणायाम, ध्यान, कर्मयोग, भाषण, समूह–चर्चा, प्रश्न–उत्तर सत्र भी इस कोर्स का अंग होंगे।

५. प्रशिक्षण, आवास तथा भोजन के लिए कोई शुल्क नहीं लिया जायेगा। प्रतिदिन शुद्ध शाकाहारी भोजन (जलपान तथा दो बार भोजन) उपलब्ध कराया जायेगा। धूम्रपान, मद्यपान तथा नशीले पदार्थों का सेवन सर्वथा वर्जित है।

६. आवेदन–पत्र तथा विवरण–पत्रिका अकादमी के कुलसचिव से डाक द्वारा प्राप्त किये जा सकते हैं अथवा इन्हें हमारी वेबसाइट **www.sivanandaonline.org** से डाउनलोड भी किया जा सकता है। अभ्यर्थी इस कोर्स में प्रवेश हेतु हमारी वेबसाइट **www.sivanandaonline.org** में दिये गये लिंक द्वारा ऑनलाइन आवेदन भी कर सकते हैं। भरे हुए आवेदन–पत्र अधोलिखित पदाधिकारी के पास **३१–३–२०२३** तक पहुँच जाने चाहिए।

७. योग–वेदान्त फॉरेस्ट अकादमी का उद्देश्य विद्यार्थियों को शैक्षिक–सैद्धान्तिक ज्ञान प्रदान करने के साथ–साथ उन्हें इस योग्य भी बनाना है कि वे अपने व्यक्तित्व को पूर्ण तथा संघटित बना सकें तथा हितकारी एवं सफल जीवन व्यतीत कर सकें। अकादमी द्वारा संचालित किये जाने वाले कोर्स का स्वरूप विद्यार्थी को केवल शास्त्रीय ज्ञान अथवा पुस्तकीय जानकारी प्रदान करने की अपेक्षा अनुशासनात्मक अधिक है।

शिवानन्दनगर
फरवरी, २०२३

कुलसचिव (रजिस्ट्रार)
योग–वेदान्त फॉरेस्ट अकादमी
फोन : – ०१३५–२४३३५४१ (अकादमी)
ईमेल : – yvfacademy@gmail.com

डोनेशन सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण सूचना

प्रशासनिक कारणों तथा वर्तमान अकाउण्टिंग व्यवस्था (Accounting System) को थोड़ा सरल बनाने के उद्देश्य से, १० मार्च २०२१ को आयोजित 'बोर्ड ऑफ मैनेजमेण्ट' मीटिंग एवं ११ मार्च २०२१ को आयोजित 'बोर्ड ऑफ ट्रस्टीज' मीटिंग में यह निर्णय लिया गया है कि द डिवाइन लाइफ सोसायटी के लिए भेजे जाने वाले डोनेशन दिनांक १ अप्रैल २०२१ से केवल निम्नलिखित अकाउण्टस हेड्स हेतु ही स्वीकार किये जायेंगे—

जनरल डोनेशन

(१) आश्रम जनरल डोनेशन

(२) अन्नक्षेत्र

(३) मेडिकल रिलीफ

कॉरपस डोनेशन

शिवानन्द आश्रम कॉरपस (मूलधन) फण्ड

अत: भक्तवृन्द से अनुरोध है कि वे केवल उपर्युक्त अकाउण्टस हेड्स हेतु ही डोनेशन भेजें।

आश्रम के भक्त एवं हितैषी जनों को यह भी सूचित किया जाता है कि

- 'आश्रम जनरल डोनेशन' में प्राप्त धनराशि का उपयोग द डिवाइन लाइफ सोसायटी की समस्त धार्मिक, आध्यात्मिक एवं सेवा-सम्बन्धी गतिविधियों हेतु किया जायेगा यथा शिवानन्द होम द्वारा गृहविहीन-निराश्रितों की देखभाल, लेप्रसी रिलीफ वर्क द्वारा कुष्ठरोगियों की सेवा, निर्धन छात्रों को शैक्षिक सहायता, योग-वेदान्त फॉरेस्ट अकादमी का संचालन, नि:शुल्क वितरणार्थ आध्यात्मिक पुस्तकों का मुद्रण, आध्यात्मिक ज्ञान का प्रचार-प्रसार, आश्रम-मन्दिरों में पूजा-अर्चना, आश्रम एवं गौशाला का रख-रखाव तथा आश्रम की नियमित धार्मिक-आध्यात्मिक गतिविधियों का संचालन। इस धनराशि का उपयोग सोसायटी द्वारा समय-समय पर आयोजित अन्य विभिन्न धार्मिक, आध्यात्मिक एवं सेवा-सम्बन्धी कार्यक्रमों हेतु भी किया जायेगा।
- 'मेडिकल रिलीफ' के अन्तर्गत प्राप्त डोनेशन का उपयोग शिवानन्द चैरिटेबल हॉस्पिटल में जरूरतमन्द रोगियों के उपचार हेतु तथा सोसायटी द्वारा संचालित अन्य चिकित्सा-सम्बन्धी कार्यक्रमों हेतु किया जायेगा।
- इसी प्रकार 'शिवानन्द आश्रम कॉरपस (मूलधन) फण्ड' से प्राप्त ब्याज की राशि का सदुपयोग सोसायटी की समस्त गतिविधियों (धार्मिक, आध्यात्मिक एवं सेवा-सम्बन्धी) हेतु किया जायेगा।
- इस सम्बन्ध में यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि सोसायटी अपनी किसी गतिविधि को समाप्त नहीं कर रही है। सोसायटी की सभी आश्रम-सम्बन्धी एवं सेवा-सम्बन्धी गतिविधियाँ पूर्ववत् चलती रहेंगी; यद्यपि डोनेशन स्वीकार करने हेतु अकाउण्टस हेड्स की संख्या कम कर दी गयी है।

- द डिवाइन लाइफ सोसायटी के लिए डोनेशन 'ऑनलाइन डोनेशन सुविधा' द्वारा वेब एड्रेस **https://donations.sivanandaonline.org** के माध्यम से अथवा हमारी वेबसाइट **www.sivanandaonline.org** में दिये गये 'ऑनलाइन डोनेशन' लिंक के माध्यम से भेजा जा सकता है।
- डोनेशन ऋषिकेश में देय बैंकड्राफ्ट अथवा चेक अथवा इलेक्ट्रानिक मनीआर्डर (E.M.O.) द्वारा "The Divine Life Society", Shivanandanagar, Uttarakhand के नाम भी भेजा जा सकता है। कृपया ड्राफ्ट अथवा चेक अथवा ई. एम. ओ. के साथ एक पत्र में डोनेशन का उद्देश्य, अपना डाक पता, फोन नम्बर, ई मेल आई डी तथा पैन नम्बर लिख कर भेजें।
- भक्तवृन्द को यह भी सूचित किया जाता है कि आश्रम-मन्दिरों में पूजा-अर्चना करवाने हेतु कोई धनराशि नहीं ली जायेगी। जो व्यक्ति अपने अथवा अपने परिवार के किसी सदस्य के नाम पर पूजा करवाना चाहते हैं, वे इस सम्बन्ध में आश्रम के महासचिव अथवा परमाध्यक्ष को आवश्यक विवरण के साथ एक अनुरोध-पत्र ई मेल अथवा डाक द्वारा भेज सकते हैं जिससे कि उनके नाम पर पूजा सम्पन्न हो सके।
- सोसायटी को भेजे जाने वाले सदस्यता शुल्क, प्रवेश शुल्क, आजीवन सदस्यता शुल्क, पैट्रनशिप शुल्क, शाखा-सम्बद्धता शुल्क एवं एस पी एल को भेजी जाने वाली अग्रिम धनराशि से सम्बन्धित प्रावधानों एवं निर्देशों में कोई परिवर्तन नहीं किया गया है।

द डिवाइन लाइफ सोसायटी मुख्यालय के सदस्यता-शुल्क एवं शाखाओं के सम्बद्धता-शुल्क की दरें

१.	नवीन सदस्यता-शुल्क*		₹ १५०/-
	प्रवेश-शुल्क	₹ ५०/-	
	सदस्यता-शुल्क	₹ १००/-	
२.	सदस्यता नवीकरण-शुल्क (वार्षिक)		₹ १००/-
३.	नयी शाखा खोलने का शुल्क**		₹ १०००/-
	प्रवेश-शुल्क	₹ ५००/-	
	सम्बद्धता-शुल्क	₹ ५००/-	
४.	शाखा-सम्बद्धता नवीकरण शुल्क (वार्षिक)		₹ ५००/-

* सदस्यता के इच्छुक प्रार्थी कृपया प्रार्थना-पत्र के साथ अपना फोटो पहचान-पत्र (Photo Identity) तथा निवास-स्थान के प्रमाण-स्वरूप कोई दस्तावेज (Residential Proof) भेजें।

**नयी शाखा खोलने के लिए मुख्यालय से लिखित अनुमति लेनी होगी।

⇨ कृपया सदस्यता-शुल्क और शाखा-सम्बद्धता-शुल्क ऋषिकेश में स्थित किसी भी बैंक के नाम बने डिमांड ड्राफ्ट अथवा चेक द्वारा भेजें।

डी एल एस शाखाओं के प्रतिवेदन

भारतीय शाखाएँ

अम्बाला (हरियाणा): शाखा द्वारा प्रत्येक रविवार को प्रार्थना, भजन-कीर्तन और स्वाध्याय इत्यादि सहित नियमित सत्संग चलते रहे। रोगियों की प्रतिदिन नि:शुल्क होमियोपैथी चिकित्सा सेवा तथा जल सेवा पूर्ववत् चलती रहीं। ८ जनवरी को शाखा द्वारा विशेष सत्संग आयोजित किया गया।

कबिसूर्यनगर (ओडिशा): शाखा द्वारा दैनिक नारायण सेवा तथा रविवारों और गुरुवारों को साप्ताहिक सत्संग किये जाते रहे। इसके अतिरिक्त साधना पंचकम् पर ९ से १४ जनवरी तक प्रवचन आयोजित किये गये। २८ को पादुका पूजा एवं भजन-कीर्तन सहित शाखा का उद्घाटन दिवस मनाया गया। १८ फरवरी को अर्चना तथा 'ॐ नमः शिवाय' मन्त्र जप सहित महाशिवरात्रि मनायी गयी।

काकचिंग (मणिपुर): शाखा द्वारा रुद्री पाठ और शिवमहिम्न स्तोत्र सहित दैनिक पूजा का कार्यक्रम चलता रहा। १८ फरवरी को रुद्री पाठ, भजन-कीर्तन सहित महाशिवरात्रि मनायी गयी। ९ और १४ को भक्तों के आवास पर विशेष सत्संग आयोजित किये गये। १२ को महामन्त्र कीर्तन किया गया।

काकिनाडा (आन्ध्र प्रदेश): शाखा द्वारा शनिवारों को भगवद्गीता पर प्रवचनों सहित साप्ताहिक सत्संग तथा ८ जनवरी को जप, ध्यान, भजन और प्रवचन सहित मातृ सत्संग किया गया। २२ को शाखा का १४वाँ वार्षिक दिवस मनाया गया।

गाँधीनगर (गुजरात): शाखा के दैनिक दो सत्र योगासन कक्षा के तथा रविवार को साप्ताहिक सत्संग के कार्यक्रम चलते रहे। डीएलएस मुख्यालय, ऋषिकेश के श्री स्वामी धर्मनिष्ठानन्द जी के निर्देशन में १२ और १४ फरवरी को शाखा द्वारा दो विशेष सत्संग आयोजित किये गये।

गुमरगुण्डा (छत्तीसगढ़): शाखा के नियमित कार्यक्रम यथावत् चलते रहे। विशेष कार्यक्रमों में—शाखा अध्यक्ष श्री स्वामी विष्णुदयानन्द जी महाराज के माध्यम से निकटवर्ती गाँव में २६ जनवरी से २ फरवरी तक श्रीमद् भागवत सप्ताह तथा समापन पर विशाल भण्डारे का आयोजन किया गया, ५ को माघपूर्णिमा पर २ घण्टे का अखण्ड कीर्तन किया गया, ५ से १९ फरवरी तक महाशिवरात्रि के उपलक्ष्य में पञ्चाक्षरी मन्त्र का विभिन्न गाँवों में टोलियाँ बना कर अखण्ड संकीर्तन का आयोजन किया गया।

चाँदपुर (ओडिशा): शाखा द्वारा दो बार दैनिक पूजा, साप्ताहिक सत्संग शनिवार को, सुन्दरकाण्ड पारायण संक्रान्ति दिनों को और चल सत्संग ८ और २४ को किये जाते रहे। महाशिवरात्रि १८ फरवरी को अभिषेक तथा अखण्ड नाम संकीर्तन सहित मनायी गयी।

चौद्वार (ओडिशा): शाखा द्वारा पादुका पूजा, गीता पाठ और हनुमान चालीसा पाठ सहित साप्ताहिक सत्संग चलते रहे। २३ फरवरी से १ मार्च तक श्रीमद् भागवत पारायण और प्रवचन कार्यक्रम आयोजित किया गया तथा शाखा का स्थापना दिवस एवं स्वर्ण जयन्ती भी मनायी गयी।

छत्रपुर (ओडिशा): शाखा द्वारा दैनिक पूजा, गुरुवारों को साप्ताहिक सत्संग तथा प्रत्येक ८ एवं २४ को पादुका पूजा के कार्यक्रम चलते रहे। जनवरी मास में ग्यारह विशेष सत्संग भिन्न-भिन्न स्थानों पर किये गये। २६ को सरस्वती पूजा भजन-कीर्तन तथा विष्णुसहस्रनाम पारायण सहित की गयी। २८ को साधना दिवस मनाया गया। १०

और २६ जनवरी को सुन्दरकाण्ड पारायण किया गया।

नन्दिनीनगर (छत्तीसगढ़): शाखा द्वारा दैनिक प्रातःकालीन प्रार्थना, गीता पाठ सहित, सोमवारों को शिव अभिषेक, हनुमान चालीसा और विष्णुसहस्रनाम पारायण, गुरुवारों को साप्ताहिक सत्संग तथा शनिवारों को हनुमान चालीसा और सुन्दरकाण्ड पारायण सहित मातृ सत्संग किये जाते रहे। इसके अतिरिक्त १३ जनवरी को विशेष सत्संग आयोजित किया गया। १८ फरवरी को अभिषेक, पञ्चाक्षरी मन्त्र जप तथा भजन-कीर्तन सहित महाशिवरात्रि मनायी गयी।

पंचकूला (हरियाणा): ८ फरवरी को 'सिविल हॉस्पिटल' में नारायण सेवा की गयी और २४ को गोशाला में गायों को हरा चारा खिलाया गया। साप्ताहिक सत्संग रविवारों को भक्तों के आवास पर स्वाध्याय, भजन और विश्व-कल्याण हेतु प्रार्थना सहित पूर्ववत् चलते रहे।

पत्तमडै (तमिलनाडु): शाखा द्वारा मास की प्रत्येक ८ को पादुका पूजा का कार्यक्रम चलता रहा। ५ फरवरी को अन्तरयोगम् और भजनों सहित विशेष सत्संग किया गया, तिरुवासगम् का २८ वाँ अध्ययन किया गया तथा तमिलनाडु की सभी शाखाओं में ४०० पुस्तकों का निःशुल्क वितरण किया गया।

पुरी (ओडिशा): दैनिक पादुका पूजा, गुरुवारों और रविवारों को साप्ताहिक सत्संग, ८ एवं २४ को गुरु पादुका पूजा। एकादशियों को गीता पाठ तथा संक्रान्ति को हनुमान चालीसा पाठ के कार्यक्रम शाखा द्वारा यथावत् चलते रहे। २६ जनवरी को सरस्वती पूजा आयोजित की गयी।

बरगढ़ (ओडिशा): शाखा द्वारा दैनिक पूजा, सोमवारों को रुद्राभिषेक, योग एवं प्राणायाम की कक्षाएँ, गुरुवारों को गुरु पादुका पूजा, शनिवारों को साप्ताहिक सत्संग तथा रविवारों को भगवद् गीता पर विचार-विनिमय के साथ सत्संग किये जाते रहे। इसके साथ-साथ रोगियों की होमियोपैथी द्वारा धर्मार्थ चिकित्सा की जाती रही। १८ फरवरी को महाशिवरात्रि रुद्राभिषेक, भजन और कीर्तन सहित मनायी गयी।

बीकानेर (राजस्थान): शाखा द्वारा दैनिक पूजा, शनिवारों को सुन्दरकाण्ड, हनुमान चालीसा पारायण और महामन्त्र संकीर्तन सहित सत्संग चलते रहे। अमावास्या को हवन तथा जरूरतमन्दों को वस्त्र एवं अन्न वितरण के कार्यक्रम भी चलते रहे। इसके अतिरिक्त शाखा द्वारा १० से १४ फरवरी तक पाँच दिवसीय ध्यान शिविर आयोजित किया गया। १८ को रुद्राभिषेक सहित महाशिवरात्रि मनायी गयी। २० से २७ फरवरी तक श्रीमद् भागवत सप्ताह आयोजित किया गया।

ब्रह्मपुर (ओडिशा): शाखा द्वारा रविवारों को साप्ताहिक सत्संग किये जाते रहे। एकादशियों को गीता पाठ तथा संक्रान्तियों को सुन्दरकाण्ड पारायण किया जाता रहा। ३० जनवरी को हरि कथा, तीसरे रविवार को साधना दिवस, १८ फरवरी को महाशिवरात्रि, २५ को एक विशेष सत्संग तथा २० और २६ फरवरी को भक्तों के आवास पर चल सत्संग आयोजित किये गये।

भीमकाण्ड (ओडिशा): शाखा द्वारा दैनिक पादुका पूजा और रविवारों को साप्ताहिक सत्संग किये जाते रहे। २४ फरवरी से २ मार्च तक श्रीमद् भागवत पारायण एवं प्रवचन आयोजित किये गये। २४ से २८ फरवरी तक विशेष प्रवचन आयोजित किये गये।

भुवनेश्वर (ओडिशा): शाखा द्वारा दैनिक पूजा और नारायण सेवा, गुरुवारों को साप्ताहिक सत्संग, सप्ताह में चार दिन निःशुल्क स्वास्थ्य सेवा; ४, ६, १४, २३ तथा २६ फरवरी को विशेष सत्संग किये गये। १८ फरवरी को

महाशिवरात्रि अभिषेक तथा 'ॐ नमः शिवाय' मन्त्र के जप सहित मनायी गयी। शाखा द्वारा नाम संकीर्तन १० को, 'श्री राम जय राम जय जय राम' मन्त्र जप २४ को, तथा हनुमान चालीस पाठ २५ को आयोजित किया गया।

महासमुन्द शाखा (छत्तीसगढ़): प्रतिमाह अनुसार शाखा द्वारा दैनिक प्रार्थना, भजन, गीता श्लोक पाठ, आसन, प्राणायाम, सूर्यनमस्कार; प्रत्येक मंगलवार और शनिवार को श्री हनुमान चालीसा और सुन्दरकाण्ड पाठ तथा रविवार को गीता पाठ आदि गतिविधियाँ चलती रहीं। इसके अतिरिक्त १८ फरवरी को महाशिवरात्रि अभिषेक तथा 'ॐ नमः शिवाय' मन्त्र के अखण्ड कीर्तन सहित मनायी गयी।

राजा पार्क शाखा, जयपुर (राजस्थान): जनवरी मास में शाखा की आध्यात्मिक, स्वास्थ्य सम्बन्धी और जल सेवा इत्यादि की समस्त गतिविधियाँ यथावत् चलती रहीं। स्वामी शिवानन्द होमियोपैथी चिकित्सालय के माध्यम से रोगियों की निःशुल्क चिकित्सा की गयी। विशेष कार्यक्रमों में—८ जनवरी को नववर्ष स्नेह मिलन तथा पौष उत्सव हवन, भजन-कीर्तन, आरती एवं प्रीतिभोज सहित मनाया गया। कोविड के तीन वर्षों के उपरान्त महिला सत्संग प्रत्येक सोमवार को पुनः उत्साह पूर्वक प्रारम्भ किया गया। २६ जनवरी को अखिल भारतीय गोरखा क्लब तथा दिव्य जीवन संघ शाखा के संयुक्त तत्त्वावधान में मन्दिर प्रांगण में रक्तदान शिविर का आयोजन किया गया जिसमें १४ दानवीरों ने रक्तदान किया।

राउरकेला (ओडिशा): शाखा द्वारा दैनिक योग कक्षाएँ, पादुका पूजा, भजन-कीर्तन, अर्चना और विष्णुसहस्रनाम सहित गुरुवारों और रविवारों को सत्संग इत्यादि के कार्यक्रम चलते रहे। निःशुल्क ऐक्युप्रेशर चिकित्सा एवं औषधियाँ जरूरतमन्द लोगों को पूर्ववत् दी जाती रहीं। ४, ६, ८ और १९ फरवरी को विशेष सत्संग आयोजित किये गये। १८ को महाशिवरात्रि पादुका पूजा, अभिषेक तथा 'ॐ नमः शिवाय' मन्त्र के जप सहित मनायी गयी।

लखनऊ (उत्तर प्रदेश): शाखा द्वारा ५ और १९ फरवरी को लेखराज होम में प्रार्थना, भजन, मन्त्र जप और गीता स्वाध्याय इत्यादि सहित विशेष सत्संग किये गये।

लांजीपल्ली महिला शाखा (ओडिशा): शाखा द्वारा दैनिक पूजा, रविवारों को साप्ताहिक सत्संग, गुरुवारों को पादुका पूजा एवं चल सत्संग, एकादशियों को गीता पाठ, संक्रान्ति दिवस को हनुमान चालीसा, सुन्दरकाण्ड पारायण तथा नारायण सेवा के कार्यक्रम चलते रहे। १८ फरवरी को महाशिवरात्रि अभिषेक, 'ॐ नमः शिवाय' मन्त्र जप तथा सुन्दरकाण्ड पारायण इत्यादि सहित मनायी गयी।

विशाख रूरल ब्रांच (आन्ध्र प्रदेश): शाखा द्वारा विश्वनाथ मन्दिर में दैनिक पूजा तथा सोमवारों को भगवन्नाम संकीर्तन के कार्यक्रम चलते रहे। सप्ताह में छह दिन विभिन्न निकटवर्ती गाँवों में सत्संग किया जाता रहा। ४ फरवरी को नगर-संकीर्तन किया गया। ५ को जप, ध्यान तथा गीता पर प्रवचनों सहित मासिक सत्संग किया गया। १८ को महाशिवरात्रि अभिषेक तथा नाम-स्मरण सहित मनायी गयी। १९ को कोट्टावलसा में विशेष सत्संग आयोजित किया गया।

साउथ बलांडा (ओडिशा): शाखा द्वारा दैनिक पूजा, प्रत्येक शुक्रवार को साप्ताहिक सत्संग, ८ एवं २४ को पादुका पूजा आदि की नियमित गतिविधियाँ चलती रहीं। गीता पाठ, विष्णुसहस्रनाम पाठ और हनुमान चालीसा पाठ एकादशियों को किया जाता रहा। १८ फरवरी को महाशिवरात्रि 'ॐ नमः शिवाय' मन्त्र के जप सहित मनायी गयी। विश्व-शान्ति एवं विश्व-बन्धुत्व हेतु ३ जनवरी और २५ फरवरी को अखण्ड महामन्त्र संकीर्तन किया गया।

हिन्दी में उपलब्ध पुस्तकों की नवीनतम सूची

श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज कृत

अच्छी नींद कैसे सोयें	₹ ७०/-
अध्यात्मविद्या	U.P.
कर्म और रोग	२५/-
कर्मयोग-साधना	१३०/-
गीता-प्रबोधिनी	५५/-
गुरु-तत्त्व	५५/-
घरेलू चिकित्सा	U.P.
जपयोग	१२०/-
जीवन में सफलता के रहस्य	१८५/-
ज्योति, शक्ति और प्रज्ञा	४०/-
दिव्योपदेश	४०/-
देवी माहात्म्य	११५/-
धनवान् कैसे बनें	५०/-
धारणा और ध्यान	२१०/-
ध्यानयोग	१३०/-
प्राणायाम-साधना	७५/-
बालकों के लिए दिव्य जीवन सन्देश	१००/-
ब्रह्मचर्य-साधना	११०/-
भगवान् शिव और उनकी आराधना	१५०/-
भगवान् श्रीकृष्ण	१३०/-
मन : रहस्य और निग्रह	२०५/-
मरणोत्तर जीवन और पुनर्जन्म	१३५/-
मानसिक शक्ति	१३०/-
मूर्तिपूजा का दर्शन और महत्त्व	३०/-
मैं इसका उत्तर दूँ?	१३०/-
श्रीमद्भगवद्गीता	४२५/-
योगाभ्यास का मूलाधार	U.P.
योगवासिष्ठ की कथाएँ	९०/-
योगासन	११५/-
विद्यार्थी-जीवन में सफलता	६०/-
शिवानन्द-आत्मकथा	१२०/-
सत्संग भजन माला	₹ १६०/-
सत्संग और स्वाध्याय	६०/-
सद्गुणों का अर्जन एवं दुर्गुणों का नाश किस प्रकार करें	१९५/-
सन्त-चरित्र	२३५/-
सौ वर्ष कैसे जियें	९५/-
साधना	U.P.
स्वरयोग	८०/-
हठयोग	१००/-
हिन्दूतत्त्व-विवेचन	१६०/-

श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज कृत

अध्यात्म-प्रसून	३५/-
आलोक-पुंज	१०५/-
ज्योति-पथ की ओर	१२५/-
त्याग : शरणागति	२५/-
भगवान् का मातृरूप	७०/-
मोक्ष सम्भव है	३५/-
योग-सन्दर्शिका	५५/-
शाश्वत सन्देश	५५/-
शोकातीत पथ	१४०/-
साधना सार	३५/-

श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज कृत

नित्य वन्दना	४५/-

अन्य लेखक कृत

एकादशोपनिषदः (मूल मन्त्राः)	१४०/-
गुरुदेव कुटीर में भजन-कीर्तन	५०/-
*चिदानन्दम्	२००/-
जीवन-स्रोत	१५०/-
शारीरकमीमांसादर्शनम्	१५/-
शिव स्तोत्र माला	३५/-
श्रीमद्भगवद्गीता (मूलमात्रम्)	१००/-
*सर्वस्नेही हृदय	१००/-
दिव्य योगा	९०/-

५०% अग्रिम। पैकिंग अतिरिक्त । विस्तृत जानकारी के लिए निम्नांकित पते पर सम्पर्क करें :

द डिवाइन लाइफ सोसायटी, पत्रालय : शिवानन्दनगर—२४९१९२, जिला : टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड, भारत

फोन : ०१३५-२४३४७८०, २४३००४०; E-mail : bookstore@sivanandaonline.org

For online orders and Catalogue : dlsbooks.org

NEW EDITION

THE BHAGAVAD GITA

Swami Sivananda

Text, Word-to-word meaning, Translation and Commentary

Pages: 624 **Price: ₹ 500/-**

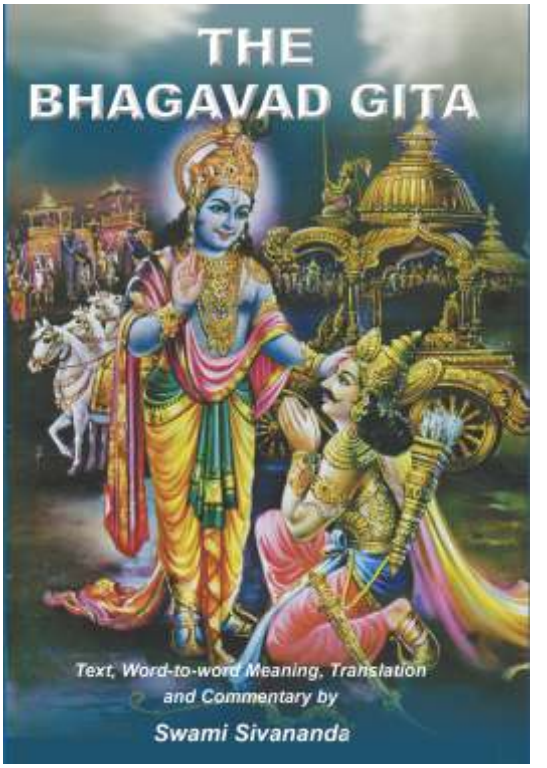

ESSENCE OF RAMAYANA

Swami Sivananda

Pages: 208 **Price: ₹ 180/-**

बीस महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक नियम

परम श्रद्धेय श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

१. **ब्राह्ममुहूर्त-जागरण**—नित्यप्रति प्रातः चार बजे उठिए। यह ब्राह्ममुहूर्त ईश्वर के ध्यान के लिए बहुत अनुकूल है।

२. **आसन**—पद्मासन, सिद्धासन अथवा सुखासन पर जप तथा ध्यान के लिए आधे घण्टे के लिए पूर्व अथवा उत्तर दिशा की ओर मुख करके बैठ जाइए। ध्यान के समय को शनैः-शनैः तीन घण्टे तक बढ़ाइए। ब्रह्मचर्य तथा स्वास्थ्य के लिए शीर्षासन अथवा सर्वांगासन कीजिए। हलके शारीरिक व्यायाम (जैसे टहलना आदि) नियमित रूप से कीजिए। बीस बार प्राणायाम कीजिए।

३. **जप**—अपनी रुचि या प्रकृति के अनुसार किसी भी मन्त्र (जैसे '**ॐ**', '**ॐ नमो नारायणाय**', '**ॐ नमः शिवाय**', '**ॐ नमो भगवते वासुदेवाय**', '**ॐ श्री शरवणभवाय नमः**', '**सीताराम**', '**श्री राम**', '**हरि ॐ**' या गायत्री) का १०८ से २१,६०० बार प्रतिदिन जप कीजिए (मालाओं की संख्या १ और २०० के बीच)।

४. **आहार-संयम**—शुद्ध सात्त्विक आहार लीजिए। मिर्च, इमली, लहसुन, प्याज, खट्टे पदार्थ, तेल, सरसों तथा हींग का त्याग कीजिए। मिताहार कीजिए। आवश्यकता से अधिक खा कर पेट पर बोझ न डालिए। वर्ष में एक या दो बार एक पखवाड़े के लिए उस वस्तु का परित्याग कीजिए जिसे मन सबसे अधिक पसन्द करता है। सादा भोजन कीजिए। दूध तथा फल एकाग्रता में सहायक होते हैं। भोजन को जीवन-निर्वाह के लिए औषधि के समान लीजिए। भोग के लिए भोजन करना पाप है। एक माह के लिए नमक तथा चीनी का परित्याग कीजिए। बिना चटनी तथा अचार के केवल चावल, रोटी तथा दाल पर ही निर्वाह करने की क्षमता आपमें होनी चाहिए। दाल के लिए और अधिक नमक तथा चाय, काफी और दूध के लिए और अधिक चीनी न माँगिए।

५. **ध्यान-कक्ष**—ध्यान-कक्ष अलग होना चाहिए। उसे तालेकुंजी से बन्द रखिए।

६. **दान**—प्रतिमाह अथवा प्रतिदिन यथाशक्ति नियमित रूप से दान दीजिए अथवा एक रुपये में दस पैसे के हिसाब से दान दीजिए।

७. **स्वाध्याय**—गीता, रामायण, भागवत, विष्णुसहस्रनाम, आदित्यहृदय, उपनिषद्, योगवासिष्ठ, बाइबिल, जेन्दअवस्ता, कुरान आदि का आधा घण्टे तक नित्य स्वाध्याय कीजिए तथा शुद्ध विचार रखिए।

८. **ब्रह्मचर्य**—बहुत ही सावधानीपूर्वक वीर्य की रक्षा कीजिए। वीर्य विभूति है। वीर्य ही सम्पूर्ण शक्ति है। वीर्य ही सम्पत्ति है। वीर्य जीवन, विचार तथा बुद्धि का सार है।

९. **स्तोत्र-पाठ**—प्रार्थना के कुछ श्लोकों अथवा स्तोत्रों को याद कर लीजिए। जप अथवा ध्यान आरम्भ करने से पहले उनका पाठ कीजिए। इससे मन शीघ्र ही समुन्नत हो जायेगा।

१०. **सत्संग**—निरन्तर सत्संग कीजिए। कुसंगति, धूम्रपान, मांस, शराब आदि का पूर्णतः त्याग कीजिए। बुरी आदतों में न फँसिए।

११. **व्रत**—एकादशी को उपवास कीजिए या केवल दूध तथा फल पर निर्वाह कीजिए।

१२. **जप-माला**—जप-माला को अपने गले में पहनिए अथवा जेब में रखिए। रात्रि में इसे तकिये के नीचे रखिए।

१३. **मौन-व्रत**—नित्यप्रति कुछ घण्टों के लिए मौन-व्रत कीजिए।

१४. **वाणी-संयम**—प्रत्येक परिस्थिति में सत्य बोलिए। थोड़ा बोलिए। मधुर बोलिए।

१५. **अपरिग्रह**—अपनी आवश्यकताओं को कम कीजिए। यदि आपके पास चार कमीजें हैं, तो इनकी संख्या तीन या दो कर दीजिए। सुखी तथा सन्तुष्ट जीवन बिताइए। अनावश्यक चिन्ताएँ त्यागिए। सादा जीवन व्यतीत कीजिए तथा उच्च विचार रखिए।

१६. **हिंसा-परिहार**—कभी भी किसी को चोट न पहुँचाइए **(अहिंसा परमो धर्मः)**। क्रोध को प्रेम, क्षमा तथा दया से नियन्त्रित कीजिए।

१७. **आत्म-निर्भरता**—सेवकों पर निर्भर न रहिए। आत्म-निर्भरता सर्वोत्तम गुण है।

१८. **आध्यात्मिक डायरी**—सोने से पहले दिन-भर की अपनी गलतियों पर विचार कीजिए। आत्म-विश्लेषण कीजिए। दैनिक आध्यात्मिक डायरी तथा आत्म-सुधार रजिस्टर रखिए। भूतकाल की गलतियों का चिन्तन न कीजिए।

१९. **कर्तव्य-पालन**—याद रखिए, मृत्यु हर क्षण आपकी प्रतीक्षा कर रही है। अपने कर्तव्यों का पालन करने में न चूकिए। सदाचारी बनिए।

२०. **ईश-चिन्तन**—प्रातः उठते ही तथा सोने से पहले ईश्वर का चिन्तन कीजिए। ईश्वर को पूर्ण आत्मार्पण कीजिए।

यह समस्त आध्यात्मिक साधनाओं का सार है। इससे आप मोक्ष प्राप्त करेंगे। इन नियमों का दृढ़तापूर्वक पालन करना चाहिए। अपने मन को ढील न दीजिए।

Registrar of Newspapers for India
No. 71610/1999

Postal-Registration No. TRI/005/2021-23

अप्रैल २०२३

LICENSED TO POST WITHOUT PREPAYMENT
(Licence No. WPP No. 02/21-23, Valid upto: 31-12-2023)
DATE OF PUBLICATION: 20th OF EVERY MONTH
DATE OF POSTING: 20th OF EVERY MONTH
Posted at Shivanandanagar, Tehri-Garhwal, Uttarakhand

भगवान् के गुण

भगवान् चेतन-अचेतन, सजीव-निर्जीव आदि प्रत्येक पदार्थ मात्र की समष्टि हैं। वे सर्व प्रकार के दोषों और सीमाओं से परे हैं। वे सर्वशक्तिमान् हैं, सर्वज्ञ हैं और सर्वव्यापी हैं। प्राणी मात्र के वे अन्तर्यामी हैं। वे आदि, मध्य एवं अन्त रहित हैं। वे अन्दर से नियन्त्रण करते हैं। परमेश्वर, अमरता, स्वतन्त्रता, पूर्णता, शान्ति, आनन्द, प्रेम—ये सारे पर्यायवाची शब्द हैं।

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरँ शुद्धमपापविद्धम्।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूर्याथातथ्यतोऽर्थान्व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः॥

ईशावास्योपनिषत् — ८

वह आत्मा सर्वगत, शुद्ध, अशरीरी, अक्षत, स्नायु से रहित, निर्मल, अपापहत, सर्वद्रष्टा, सर्वज्ञ, सर्वोत्कृष्ट और स्वयम्भू है। उसी ने नित्य-सिद्ध संवत्सर नामक प्रजापतियों के लिए यथायोग्य रीति से अर्थों (कर्तव्यों या पदार्थों) का विभाग किया है।

भगवान् सर्वशक्तिमान् हैं; परन्तु वे इस बात में असमर्थ हैं कि स्वयं अपने अस्तित्व से इनकार कर सकें।

स्वामी शिवानन्द

सेवा में

'द डिवाइन लाइफ ट्रस्ट सोसायटी' की ओर से स्वामी अद्वैतानन्द द्वारा 'योग-वेदान्त फारेस्ट एकाडेमी प्रेस, पो. शिवानन्दनगर, जि. टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड, पिन २४९१९२' से मुद्रित तथा 'द डिवाइन लाइफ सोसायटी मुख्य कार्यालय, पो. शिवानन्दनगर, जि. टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड, पिन २४९१९२' से प्रकाशित। फोन : ०१३५-२४३००४०, २४३११९०
E-mail: generalsecretary@sivanandaonline.org ; Website : www.sivanandaonline.org ; www.dlshq.org
सम्पादक : स्वामी निर्लिप्तानन्द